DDCE Utkal University

हिंदी (एम.ए.)

M.A. (Hindi)

Semester - III

PAPER - XII

हिन्दी में नारी विमर्श

लेखक

डॉ. शंकरलाल पुरोहित

PAPER - 12

हिन्दी में नारी विमर्श

Unit - I नारी विमर्श की संकल्पना और इतिहास

Unit - II हिंदी उपन्यास साहित्य में नारी विमर्श

पाठ्यपुस्तक : (i) ठीकरे की मंगनी- नासिरा शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

(ii) पचपन खंभे लाल दीवारें - उषा प्रियंबदा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

Unit - III हिंदी कहानी में नारी विमर्श ।

पाठ्यपुस्तक - प्रतिनिधि महिला कथा सृजन :

सं-डॉ. छबिल कुमार मेहेर; प्रकाशन : सबनम पुस्तक महल, बादामबाड़ी, कटक -12

अंक विभाजन :

तीन	आलोचनात्मक प्रश्न	12×3 = 36
तीन	लघूत्तरी प्रश्न	8×3 = 24
दो	संक्षिप्त प्रश्न	5×2 = 10

कुल = 70

सत्रीय कार्य = 30

कुल अंक 100

संदर्भ ग्रंथ :

1. उपनिवेश में स्त्री - प्रभा खेतान - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2
2. इक्कीसवीं सदी की ओर - सं. सुमन कृष्णकांत - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2
3. स्त्री संघर्ष का इतिहास - राधा कुमार, वाणी प्रकाशन
4. अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य ,
   राजेन्द्र यादव , राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2

युनिट -1

1.0 भूमिका :

1.1 (क) 'नारी विमर्श' की परिभाषा'

1.2 (ख)इतिहास:

1.2.1 पश्चिमी नारी विमर्श :

1.2.2 प्राचीन पश्चिम :

1.2.3 प्राचीन भारत :

1.2.4 लोक जीवन में नारी

1.2.5 पश्चिम में आधुनिक नारी विमर्श :

1.3 भारत में स्त्री केंद्रीय आन्दोलन

1.4 हिन्दी कथा साहित्य में नारी :

1.4.1 स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श :

1.5 अन्य भाषा : ओड़िया कथा साहित्य में नारी विमर्श :

1.6 हिंदी काव्य साहित्य में महिला लेखिकाओं का योगदान

1.7 हिंदी की अन्य विधाओं में नारी विमर्श

1.8 अभ्यास प्रश्न

1.9 संदर्भ ग्रंथ

युनिट -1

(क) नारी विमर्श की संकल्पना

1.0 _भूमिका :

यह पत्र आपके लिए तीसरे सेमिस्टर के नौ पत्रों में किन्हीं पांच पत्र के रूप में रखा गया है । इन विकल्पों में 'हिन्दी में नारी विमर्श' तीसरा विकल्प है । यहाँ पर उत्कल विश्वविद्यालय में यह पहली बार 'नारी विमर्श' को पूरे पत्र के रूप में शामिल किया है । (चाहे विकल्प रूप में ही हो) । इसकी बहुत जरूरत थी । ओड़िशा का छात्र फकीरमोहन सेनापति रचित 'रेवती' कहानी पढ़ कर बड़ा हुआ है । अत: वह नारी की स्थिति पर सचेत है । यही हाल सारी दुनिया में नारी की स्थिति का है । परंतु भौगोलिक सीमा के कारण वह इससे आगे हुई प्रगति नहीं जान पाता । यह सोचता है - 'रेवती' तो शिक्षा की लालसा लिए मर जाती है । बूढ़ी दादी 'लो रेवी, आग जली, मुँह जली, सूबा खाई रेबी .." कहती जीवित बची है । पर बाद में क्या होता है इन पंक्तियों का आगामी युग में ।

यहाँ बड़ी अड़चन है तात्विक विवेचन की । भारतीय जीवन को उकेरा जाता है । रेवती को मरे सौ साल हो गए । फकीर मोहन के बाद आज हम रिजर्वेशन के जाल में उलझे हैं । नारी की स्थिति में सुधार का कोई प्रयास सफल क्यों नहीं हो रहा ? इसी चिंता से यह इतिहास की ओर देखना जरूरी हुआ है ।

भारतीय जीवन में शुरू से अब तक नारी के प्रति दृष्टि का सच्चा लेखा-जोखा उपन्यास, कहानी या कविता में मिलता है । इसकी लंबी परंपरा है । हजारों साल पहले जब हमने लिपि का आविष्कार भी नहीं किया था । तब जो रचा जाता वह मौखिक होता । हम उसे मौखिक ही दूसरों तक पहुँचा देते । फिर दूसरी पीढ़ी को ... यों पीढ़ी दर पीढ़ी परंपरा चलती गई । उन दिनों नारी - पुरुष का शारीरिक भेद तो मानते थे, परंतु और किसी प्रकार का अंतर नहीं । समाज में नारी-पुरुष का समान भाव ही हम सदियों तक स्वस्थ समाज बने रहने में सहायक रहा ।

परंतु बाद में माइग्रेसन का प्रभाव बहुत गहरा हुआ । समाज में दूर-दूर जा बसने के बाद ऐक्य तो सपना बन गया । परंपरा में जो मूल्य-हमने स्वयं बनाये वे क्रमश: बिखरते गए । वह विघटन हमारे समाज को दुर्बल करता गया । इस प्रकार इतिहास के थपेड़ों से उतार-चढ़ाव आता गया । हमारी पारंपरिक समाज व्यवस्था में भी क्रमश: परिवर्तन आता गया । कुछ मूल्य टूटे, कुछ सुधरे और कुछ स्थायी बन कर आज भी चमक रहे हैं । नारी के प्रति दृष्टि में यही उतार-चढ़ाव हमेशा लगी रही । इसमें ज्यादा प्रभाव विदेशी आक्रमणों और पर्यटकों का रहा । शासन ने जोर जबनरन परिवर्तन कराया । उसी तरह

समझ -बूझ कर शांति से नये मूल्यों का रूप प्रस्तुत कर परिवर्तन की धारा स्पष्ट की है । स्वदेशी - परदेशी परतंत्र में सब से ज्यादा तनाव नारी ने भोगा है ।

भारत वर्ष में मानव चिंतन ही रहा है । उसका निर्माण, विकास, दिशा निर्देश आदि विभिन्न बातों में मनुष्य की चर्चा हुई । बाद में अनेक कारण आते गए और यह कालक्रम में उग्र भी हुआ । इसमें असमता का भी प्रादुर्भाव हुआ । इस प्रकार समाज में ही स्थिति विषम हो गई । नारी के प्रति पूरा दृष्टिकोण एक समय नकारात्मक हो गया । पूरा समाज तो कभी भी दो भागों में नहीं बटा, पर चिंतन दिखने लगा । यहाँ तक कि विभिन्न सभ्यताओं में भी नारी के प्रति दृष्टि विभिन्न हो गई । आगे चल कर इसी आधार पर नारी चिंतन भी भिन्न रूप लेकर हमारे सामने आता है ।

इसमें सबसे बड़ा हाथ स्त्री के प्रति दृष्टिकोण का है । भारतीय दृष्टि में नारी एक **मूल्य** है । पर पाश्चात्य जगत में नारी एक **बस्तु** है । हमारे मूल्याधारित चिंतन दोनों को एक तराजू पर नहीं रख सकते ।

फिर भी नारी वर्ग ऐसा वर्ग है जो नस्ल, राष्ट्र आदि संकुचित सीमाओं के पार जाता है । जहाँ कहीं दमन है, जिस नस्ल की स्त्री त्रस्त है, यह उसे अपने परचम के नीचे लेता है । आज नारियों का स्थानीय मंडल राष्ट्रीय समूह ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गुट बन कर उनकी समस्या निराकरण की समस्या की चर्चा हो रही है । वह अपने समान अधिकारों की मांग बुलन्द कर रही है । इसे बड़ी उपलब्धि मानना होगा । यह रिजर्वेशन का स्वर बहुत तेज और उच्चांग रूप में गूंज रहा है ।

1.1 क) 'नारी विमर्श' की परिभाषा :

महिला विमर्श को पश्चिम और पूरब में भिन्न -भिन्न ढंग से परिभाषित किया है ।

पश्चिम की विद्वान इस्टेल फ्रडमेन ने मिन्न शब्दों में परिभाषित किया है -

"Feminism is a belief that although women and men are inherently of equal worth, most ties privilege men as a group. As a result , social movements are necessery to achive political equality between women and men, with the understanding that gender always intersects with other social heirarchies ."

अर्थात् पुरुष एवं स्त्री सम महत्व रखते हैं । अधिकांश समाजों में पुरुष को वरीयता देते हैं । अत: स्त्री -पुरुष समानता के लिए सामाजिक आंदोलन जरूरी है । क्योंकि लिंगाधारित अंतर अन्य सामाजिक परंपराओं में प्रवेश करता है ।

जो हो यह निश्चित है कि यह चिंतन अन्याय के विरुद्ध है ।

संक्षेप में मिलिसेंट ग्रेरेट कहती हैं - Faminism has as its goal give every women "The oppotortunity of lucaming the uest that her natural faculties wake her capablilties".

कुछ लोग इसे पश्चिमी आविष्कार कहते हैं । मगर यह सही नहीं है । यह अत्यंत नाजुक और गंभीर विषय है । इसे लेकर हमारे यहाँ पिछली आधी सदी से अलग वैचारिकता बनी है । कई बातें एक साथ आ जाती हैं । एक तरफ चिंतन है जिसे वैचारिक दर्शन या सैद्धांतिक लेखन कहते हैं । दूसरी तरफ नारी चेतना का सारा प्रसंग है । नारी संगठन या नारीवादी आंदोलन है । यह बिलकुल अलग स्तर पर एक चीज है, जो बहुत पहले से चली आ रही है । तीसरे स्तर पर वह लेखन जहाँ रचनाकार क्या सोचता है, क्या करता है, किस तरह भाषा से अपनी बात कह लेता है । रचनाकार अपने लेखन पर अपनी बात कह लेता है । रचनाकार अपने लेबल पर अपनी तरह से सोचता है और कहता है । ये धरातल स्त्री को अलग-अलग तरह से केंद्रित करते हैं । उनके अपने अनुभव भी भिन्न होते हैं ।

यहाँ ढेरों प्रश्न सामने आते हैं :

पुरुष समाज में पुरुष के बनाये नियमों के, उसके वर्चस्व के, स्त्री की अपनी निरीहता के विवशता के, कि वह अपने को उस जकड़न से, उन रूढ़ियों से, विपरीताओं से निकलने की कोशिश नहीं करती । अर्थात् स्त्री स्वभाव को समझने स्त्री विमर्श का महत्वपूर्ण लक्ष्य है । यह न कोई विचारधारा है, न पश्चिम का संस्कार । आज के बदलते समय में बदलती दृष्टि से हमें सोचने की जरूरत है । यह समय कुछ परंपराओं से मुक्त होने का है । मुक्त होने का अर्थ अपनी संस्कृति भूलना नहीं । एक संतुलनात्मक लचीलापन आधुनिक सोच ही मुक्त होना है । जो स्त्री विमर्श में मिलता है ।

इसमें रिश्ते भी है - केवल पति-पत्नी ही नहीं । परिवार में माँ के रूप में है, बहु है, बहन -बेटी है । समाज में स्त्री ऐसा व्यक्ति है जिसके तार हर वर्ग से जुड़े हैं । यह प्रेम का रस सब ओर दिखता है । जोड़ता है उसे भरता है । इसी में एक रूप प्रेमिका का भी है । यह प्यार और संबंधों की चर्चा है जो नारी विमर्श को सही दिशा देता है ।

इसमें एक रूप शोषण का भी आ जाता है । यह शोषण पति से हो सकता है, परिवार में हो सकता है । उसी प्रकार प्रेमिक से भी संभव है । समाज से भी । बाहर जब नौकरी, प्रशासन, व्यवसाय करने समाज में आती है, कहीं भी वह शोषण का सामना करती है । इस शोषण की पीड़ा, अस्मिता का संघर्ष है जो नारी विमर्श का एक प्रमुख मुद्दा बनता है । उसकी इच्छा के विरुद्ध एक दृष्टि भी वह नहीं सह पाती । यहाँ नारी का विद्रोही, संघर्ष रत रूप है जो नारी विमर्श में उभरा है ।

मतलब नारी विमर्श बहस का मुद्दा उतना नहीं जितना जागृति का है । यहाँ आधुनिकता संतुलित है । नारी से जुड़ी कुंठा है, समस्या है, उसे खुलासा करें, मार्ग स्पष्ट करें । मुख्यत: यह सब नारी विमर्श के अंतर्गत हैं ।

(ख) इतिहास

1.2.1 पश्चिमी नारी विमर्श :

वैसे 'नारी विमर्श' यह शब्द पाश्चिम में "Feminism" का हिंदी पर्याय है । परंतु पश्चिम और पूर्व में नारी को लेकर भिन्न दृष्टि है । वहाँ नारी किसी परंपरा को नहीं तोड़, वर्तमान से ही विद्रोह कर रही है । भारत में हजारों वर्ष की रूढ़ियों, परंपरा और प्रचलन को तोड़ नया कुछ करने की बात करती है मानो वह नारी अपनी अस्मिता का बोध लेकर अपनी मुक्ति की तरफ बढ़ रही है ।

आज उसमें यह बोध जाग उठा है कि वह स्वयं भी पुरुष के समकक्ष एक इकाई है । अत: किसी रूप में गुलाम या अधीनस्थ नहीं । पुरुष उस पर वर्चस्व न जमाये । अत: वह चाहती है कि सभ्यता का अर्थ है मनुष्य पशु प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करे । स्त्री-पुरुष के बीच कोई पाशविक संपर्क नहीं रहना चाहिए । वह दोनों साथी बन कर रहें । यही मूल भावना है ।

इस प्रकार स्त्री विमर्श एक प्रकार की चिंतन धारा है । जहाँ स्त्री के प्रति एक विशेष दृष्टि से चिंतन वस्तु रूप में देखा । उसके गुण दोषों पर विचार ऐसे किया जैसे कोई बाह्य पदार्थ हो । इस कमोडी -फिकेशन में मनुष्य अस्मिता खत्म हो जाती है । उसे कमोडिटी, वस्तु, रत्नपदार्थ, अनमोल निधि कहा । इस शब्दावली में 'वह' वस्तु कही गई है । विमर्श के बाद यह दृष्टि बदल जाती है । नारी एक जीवंत सत्ता स्वीकार होती है । इस प्रकार औरत अपने को व्यक्ति समझने लगती है । अंतर्मन में यह चेतना जाग्रत करना ही नारी विमर्श या स्त्री विमर्श है । स्त्री विमर्श में औरत की चर्चा वस्तु रूप से हट कर व्यक्ति रूप में की जाती है । समाज में उसकी स्वतंत्र सत्ता का युगों से हनन हुआ है । इसके कारणों की चर्चा है । इसके संबंध में आज की स्थिति की चर्चा है । समाज में स्त्री का स्थान क्या है ? स्त्री-पुरुष संबंधों और उनके अतीत तथा वर्तमान पर विवेचन विश्लेषण है । भारतीय परंपरा की रूढ़ियों और कुछ ग्रंथियों पर प्रकाश डालना है । स्वस्थ एवं गतिशील समाज के लिए स्त्री की भूमिका और दृष्टिकोण पर भी विचार होता है । कैसे उसकी रक्षा संभव है । इसमें उसके अधिकार और सामाजिक दायित्व दोनों पर संतुलित दृष्टि से चर्चा होनी है । तभी स्त्री विमर्श सार्थक सिद्ध होता है ।

1949 में सीमोन द बेउवौर ने 'The second sex' में नारी विमर्श पर पहली बार कटुतम शब्दों में लिखा । नारी को वस्तु रूप में प्रस्तुत करने पर टिप्पणी की । बाद में 'Modern women' में डोरोथी पार्कर ने इस बात की आलोचना की कि नारी को नारी रूप में देखा जाय । वह कहती है नारी पुरुष सब मानव प्राणी रूप में स्वीकार हैं । यह द्वैत मान्यता पराधीनता और सापेक्षता को जन्म देती है ।

1960 ई. में केटमिलेट ने रूढ़िवाद पर कहा -'' पुरुष स्त्रियों की समस्या पर सोचना ही नहीं चाहता स्त्रियों को अपनी खामोशी तोड़नी होगी । युगों से हो रहे अत्याचारों पर दुनिया को बताना होगा । सत्तर के दशक में बेट्टी फ्रिडन ने कहा - गृहणी यानी घरेलू औरत समाज में पराजीवी है । वह अर्धमानव की कतार में है ।

इसी को विश्लेषण कर गिलीमन ने 1993 ई. में 'In a Different voice' से कहा - बचपन में सशक्त दिखती लड़की औरत होने पर कमजोर क्यों दिखती है ? आत्मविश्वास ढह जाता है । वह बड़ी होकर पत्थर की मूरत बन जाती है ।

अब 20वीं सदी सूचना क्रांति लायी । संचार क्रांति में जनमानस को नियंत्रण में लाने का प्रयास है । व्यक्तिगत स्तर पर संवेदना शून्य किया जाए । मानव अस्तित्व के सामने यह एक संकट है । भौतिकतावाद और उपभोगतावाद की संस्कृति इहलौकितावादी सोच का यह परिमाण है । विश्व सोच रहा है कि सामूहिक प्रयास से संस्कृति का प्रवाह कैसे अक्षुण्ण रहे ।

आज नारीवाद में परिवार और विवाह पर प्रश्न चिन्ह लगाया है । उसे स्त्री दासता का चिन्ह कहा । नारीवाद में परिवार को जेल रचना कहा ।

हालांकि पहले पुरुष को दुश्मन कहा, आज स्त्रीवाद की दृष्टि से उपभोक्ता संस्कृति पर फल फूल रही व्यवस्था है जो स्त्री-पुरुष दोनों को समान रूप से गुलाम बना रही है । भूमंडलीकरण के दौर में स्त्री नये सवाल उठा रही है । इसे नवनारीवाद कहते हैं । हमने अपने भीतर की औरत को खोज निकाला है । हमारे पूर्वजों ने अपने औरतपन को नकारा । जो हासिल किया , वह ठीक है । पर वे अपने प्रति उदासीन रही । तो उदास, अकेली चिड़चिड़ी हुई । जिन्दगी जी नहीं, भोगी नहीं । आज पुरुष बदल रहे हैं । औरत भी बदल रही है ।

नारीवाद से उत्तर आधुनिकतावाद कहता है - हमसे हमारी मस्ती मत छीनो, चूड़ियां -बालियां- सैंडिल अच्छे लगते हैं । सादगी की बात छोड़ो, बहुत दंबा लिया । वह कहती है अतीत और वर्तमान जहाँ मिलते हैं । वहीं हमारी संस्कृति के सारे उत्तर मिलते हैं ।

एनीले क्लाक कहती है - हमें भाषा की खोज करनी है । ऐसी भाषा जिसमें स्त्रीत्व की रक्षा हो सके । स्त्रियों को जो भाषा मिलती है वह पुलिंग नियंत्रित है ।

आज वह नारी स्वतंत्रता के नाम पर उन्मुक्त जीवन यापन, स्वच्छ यौनाचार से विकसित एड्स जैसी बीमारी, मनोवैज्ञानिक विकृतियां, उत्तर दायित्व की स्वतंत्रता, उपभोगतावादी, भौतिकतावादी मानसिकतावाद अनिश्चय भविष्य की सूचना में घिरी है ।

1.2.2 प्राचीन पश्चिम :

विश्व में नारी चर्चा का इतिहास, भारत में बहुत पुराना है । परंतु वह लिखित नहीं है । अत: पश्चिम की चर्चा पहले कर रहे हैं ।

प्लेटो इतिहास में पहला चिंतक है, जिसके संवाद मिलते हैं । प्लेटो ने लगभग तीस संवाद लिखे । ये सारे पुरुषों के संग हुए । स्त्रियों को कोई स्थान नहीं था । प्लेटो की एकादेमी में भी एक्जीथिया और लास्थीनिया को छोड़कर किसी स्त्री को विशेष महत्व नहीं दिया । बस घरेलू महत्व तक सीमित रखा ।

अरस्तू के समय में घर का कामकाज और बच्चे बड़े करने में फुरसत नहीं पा सकती । इस प्रकार नारियाँ भौतिक जीवन में सीमित रहें ।

डेकार्ट्स के अनुसार घर-बार, बच्चों के बंधन से मुक्त होना संभव नहीं । अत: निम्न स्तर पर रहना, बौद्धिक श्रम से थके मानव का भोग का सामान बनना मात्र रहा ।

कीट ने आगे चल कर कहा -"A single moral person" अर्थत् दोनों की समझदारी पर जोर दिया । परंतु हीगल का मानना है कि पुरुषों का विकास पशुओं के साथ तुलनीय है जब कि स्त्रियों का विकास वनस्पतियों के साथ तुल्य है ।

मार्क्स के साथ नारी के प्रति दृष्टिकोण में बड़ा परिवर्तन दिखाई देता है । पूंजीवादी और साम्यवादी संघर्ष में वे स्त्री की भागीदारी का स्वागत करते हैं । वृहत्तर सामाजिक दायित्व पूरा करने में नारी भी सक्षम है । नारी को प्रोलिटेरियत और पुरुष को बूजुआ के रूप में नहीं देखते । पर प्रजन को उत्पादन से जोड़कर नहीं देखा गया । नारी की सारी प्राकृतिक क्षमताओं को आध्यात्मिक मानता है । तो फिर उसके चिंतन में पुरुष प्रधानता ही दिखाई पड़ती है ।

पश्चिम में जान स्टुअर्ट मिल पहला दार्शनिक था जिसने मताधिकार, शिक्षा और रोजगार में नारियों को पुरुषों की बराबरी की चर्चा की है । आगे चल कर मिल का मानना था - घर में नौकर हो तो "It is good that the mistress of a family with herself do the work of servants."

फिर भी पश्चिमी चिंतन प्रवाह प्रकृति और पुरुष के रिश्तों में बार-बार यह कहा गया है कि प्रकृति पर पुरुष की विजय दिखती है । अर्थात् प्राकृतिक शक्तियों को लगातार दमित रखना ही पौरुष का प्रतीक माना गया है ।

1.2.3 प्राचीन भारत :

भारत में नारी विषयक चिंतन का इतिहास बहुत पुराना है । प्राचीन काल में यहाँ नारी को

लगभग समान स्थान दिया गया है । क्योंकि उसके बिना कोई राजकार्य, धर्म कार्य, दान -दक्षिणादि संभव नहीं होता । उसी प्रकार नारी को समाज में हर क्षेत्र में पूरा अधिकार एवं दायित्व था । वह वेदाध्ययन ही नहीं, वेदों की ऋचाओं की स्रष्टा रही है । यज्ञादि उसके बिना संपन्न नहीं हो सकते थे । उसी प्रकार जो भी पुरुष संकल्प करता नारी बिना संभव न था । वह संन्यास या अन्य आश्रम में जाता, स्त्री से अनुमति जरूरी थी । शुरू से उसमें लिंगाधारित कोई समस्या ही न थी । कोई शोषण न था । धीरे-धीरे बाह्य संस्पर्श में आता गया । मनुष्य का भिन्न संस्कृति से संबंध होना और फैलाव के कारण विभिन्न समस्यायें पैदा हुई ।

यहाँ हम आर्ष ग्रंथों से एक उदाहरण ले रहे हैं :

''युवां ह घोषा पर्यश्विना यतो राज ऊँचे दुहिता पुच्छे वा नरा ।
भूतं मे अहम् उत भूतमक्तवे श्वायते रथिनं शक्तकर्यते ॥''

- मैं राजकन्या घोषा, सर्वत्र वेद की घोषणा करने वाली , वेद का संदेश सर्वत्र पहुँचानेवाली स्तुति -पाठिका हूँ । हे देव, मैं सर्वत्र आपका ही यशोगान करती हूँ और विद्वानों से आपकी चर्चा करती हूँ । आप सदा मेरे पास रह कर मेरे इन इन्द्रियरूपी अश्वों से युक्त शरीर -रूपी रथ के साथ मेरे मनरूपी अश्वका दमन करें । यहाँ आत्मानुशासन की अपेक्षा स्त्रियां स्वयं से करती हैं । वह परिष्कृत मनीषावाली समधीत स्त्री ब्रह्मवादिनी है । निश्चिंत होकर शास्थार्थ करती फिर सकती है । ये ब्रह्मचारिणी भौतिक सुखों से विरत नहीं हैं । घोषा कहती है -

''जीवनं रुदन्तिणि मन्यन्ते अध्वरे दीर्घ मनुप्रसीति दीधियुना:
वामं पितृभ्यो य इदं समेरिरेमय: पतिभ्यो: जनय: परिष्वजे ।''

जब कोई ब्रह्मवादिनी कमनीय वर की कामना करे, उसे उसकी मनोदशा के अनुकूल वर मिले । पति के घर वधू को जीवन के सभी साधन सुलभ रहें और सदा उस गृह में दया, परोपकार, उदारता, शालीनता आदि गुण नदी की तरह प्रवाह की तरह गतिशील बने रहें ।

पर्दा प्रथा तो थी ही नहीं । सास-ससुर एक साथ एक थाल में खाते थे । ऐसे अनुकूल परिवेश का प्रभाव था कि वागाम्भृणी आदि तेजस्वी स्त्रियों का आत्म विश्वास प्रखर था । वह सर्वव्यापी इयत्ता स्थापित करने कभी राजनीति करती ।

वैयक्तिक संबंधों से ऊपर सामाजिक उद्देश्यों को प्रतिष्ठित करने वाली स्त्रियों की भी परंपरा है ।

तब न सती प्रथा थी और विधवा विवाह का भी प्रावधान था ।

''अपश्यं युवतिं नीयमानां जीवां मृतोय: परिलीयमानम् ।
अन्धेन यत्तमसा प्राकृतस्त्रीत्प्रोक्तो अपायीववयं तदेनाम् ॥

मृत पति के साथ चिता पर लेटी स्त्री को देखने के बाद मैंने उसे वहाँ से हटाया, जो शोक रूपी घनांधकार से आवृत थी ।

लड़की का जन्म के समय विशेष स्वागत न हो, परंतु विकास के क्रम में वह हमेशा माता-पिता , भाई, पितामह, चाचा, मामा सब की प्रिय हो जाती है ।

आदर्श पत्नी के कर्त्तव्य -

''समख्यो देव्या धिया सं, दक्षिशपोरुचक्षसा ।

मा म आयु प्रमोणीर्भोऽहं तव वीरं विदेय देवि संहशि ॥''

धारण - पोषण में समर्थ कार्यकुशल, दूरदर्शिनी पत्नी के माध्यम से मैं संपूर्ण कार्यों का संपादन करुं । मैं उसके तथा वह मेरे जीवन को कभी हानि न पहुँचाये और मैं उसके सम्यक दर्शन से वीर पुत्र को प्राप्त करुं ।

'धारण करना' और 'घर चलाना' स्त्री के मुख्य कर्त्तव्य हैं । पुरुष के कर्त्तव्य हैं - बाहरी आक्रमणों से बचाना, आक्रमण हेतु सदा प्रस्तुत रहना ।

इसी के प्रतीक रूप शिव अर्धनाश्वीर रूप में प्रतिष्ठित होते हैं ।

1.2.4 भारतीय लोक जीवन में नारी :

भारत में युगों से स्त्री संबंधी विमर्श शास्त्रीय आधार की तरह लोकतात्विक आधार पर भी स्पष्ट है ।

लोक मानस में दो तरह की स्त्री -

I . सुखिया । 2. दुखिया ।

दो बहन, दो पत्नी, ननद -भाभी, सास - बहू, दो सहेली बन कर अक्सर व्यक्त होती हैं ।

यहाँ मां-बेटी का रिश्ता ऐसा है जहाँ विलोम नहीं होता । एक सुखी -दूसरी दु:खी ऐसा नहीं संभव । एक के सुख में दूसरी का सुख है । एक दु:खी तो दूसरी दु:खी है ।

भारत की ग्राम बधुओं में लोकगीतों , लोक कथाओं के माध्यम से लगातार व्यक्त हुई । इस में कोमल हास परिहास भी है । विद्याबुद्धि से पुरुष को पराजित करना भी व्यंजित है ।

स्त्रियों के गीतों में पुरुषों को मिलाया एक शब्द भी नहीं । मिलना, यहाँ स्त्रियों का मस्तिष्क काम करता है ।

घर में कामधंधे को लेकर (चक्की पीसना आदि) से बढ़कर परदेस में काम करते पति को पत्नी

के प्रसंग काफी हैं । कहीं विरह का रोना है, कहीं सत् परीक्षा है, कहीं शपथ लेना है, इसी में उसका तेज प्रकट हो कर उभरता है । यह परंपरा नारी की स्थिति, नारी की संभावना और नारी के भविष्य आदि व्यक्त करने आज भी जीवंत है ।

1.2.5 पश्चिम में आधुनिक नारी विमर्श :

आज नारी विमर्श एक देश, जाति या धर्म का आंदोलन नहीं है । बीसवीं सदी में इसने अनेक रूप लिए और अनेक ढंग से चर्चा हुई । उनमें कुछ नामों की चर्चा की जा रही है :

1) लिबरल फेमिनिज्म – अमेरिका में जे एफ कनेडी ने I961 में 'कमीशन आन द स्टेटस आफ वीमन' गठित किया । पर काम बहुत ढीला चला तो वहीं बेटी फायडन आदि ने ' सिविल राइट्स संगठन' और 'नेशनल आर्गनाइजेशन फार विमन' गठित किया ।संस्था का गठन I966 ई. में हुआ । इनमें कामकाजी महिलाएँ थी । ये लिबरल फेमिनिज्म की विश्वासी थी । इन्होंने जेएस मिल से प्रेरणा ली । जो कहते है भार ढोने में महिला उन्नीस है । परंतु बौद्धिक और नैतिक क्षमता एक है ।

ये राजनीतिक समानता हेतु लड़ें । वोट दें, चुनाव लड़ें । संपत्ति में समान अधिकार हो । ये भोली -भाली से अब समधिकार संपन्न होने लगी ।

2) रेडिकल फेमिनिज्म – I968 में टाइग्रेस एटकिंसन के नेतृत्व में लिबरल ग्रुप रैडिकल ग्रुप से अलग हुआ । छिटपुट सुधारों से क्या हो ? यह लड़ाई पुरुष से नहीं पितृसत्तात्मक समाज से है । योजनाबद्ध ढंग से एक-एक संस्था में (जैसे परिवार, चर्च, युनिवर्सिटी, विधान सभा) राजनैतिक और आर्थिक ढंग से संरचनात्मक परिवर्तन घटायें । साहित्यिक आलोचना में "Images of women" इन्हीं रेडिकल फेमिनिज्म का चलाया है । विवाह तथा मातृत्व को मंथन कह कर जो छूट चाहें, मिलनी चाहिए । वे कहते हैं - गर्भधारण को बार्बरिक, अपने जन्मित शिशु के प्रति प्रेम को अंधा प्रेम कहा है । यहाँ तक कि इस धारा में पोर्नोग्राफी, वेश्यावृत्ति, बलात्कार, मारपीट, सती , पर्दा , डायन दहन आदि शोषणों का आधार नारी देह है । सेक्स स्टीरियोटाइप तोड़ने को महत्व दिया । स्त्रियों के लिए कौमार्य, आत्मतृप्ति (Autoeroticisim) या लेस्बियनिज्म को उचित मान कर इन सब की वकालात की है ।

पितृसत्तात्मक समाज में यह धारणा है कि स्त्रियाँ क्रीतदासी या पण्य (Commodity) की तरह उनकी पहुँच के भीतर रहने को लाचार है । स्त्रियों को पीठासीन देवी कह कर चरण छूते रहने से भी बात नहीं बनती - भारती इतिहास में इसके अनेक उदाहरण हैं । समझौते की बात पुरुषों की ओर से होनी चाहिए । वरना यह पृथकतावादी खाई बढ़ती जायेगी ।

3)मनोविश्लेषणात्मक स्त्रीवाद – यह सारा चिंतन फ्रायड से जुड़ा है । वहाँ पर वे कहते हैं कि शिश्न-बोध होते ही पुरुषों में प्राक्एडिपीय अवस्था के अत्यधिक मातृमोह से सायास मुक्त होने की कठिन प्रक्रिया शुरू हो जाती है । इसमें वह सामाजिकता, अनुशासनप्रियता और निर्णयात्मकता से भर जाता है । स्त्रियों को इस प्रक्रिया से गुजरना नहीं पड़ता । इसलिए वे कम अनुशासित कम सामाजिक और कोमल तथा कमजोर रह जाती हैं ।

नेंसी शोदोरोव (प्रसिद्ध महिला -मनोवैज्ञानिक) ने अनेक स्त्रियों की मातृमूलक संवेदनाओं का सूक्ष्म अध्ययन कर पूरी प्रक्रिया का विश्लेषण किया है । स्त्रियों को मां से अलग अपना प्रोजेक्ट करने की जरूरत नहीं होती (शारीरिक तादात्म्यबोध के कारण) अत: इसका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर अच्छा पड़ता है । जिससे उनका जुड़ाव होता है, उनसे यह जुड़ाव पूरा होता है । किसी तरह के भावनात्मक स्खलन की शिकार वे जल्दी नहीं होती । पर, समर्पित और विलीन होने की उनकी क्षमता कई बार उनकी स्वतंत्र अस्मिता के विकास में वाधक होती है । प्राक्एडीपीय संवेदनाओं का प्रभाव ऐसा होता है कि स्त्री -पुरुष में कुछ तात्विक स्वभावगत अंतर हो जाता है ।

नस्ल (Race) एवं वर्ग (Class) भी संवेदनाओं को प्रभावित करनेवाले तत्व हैं । इलिजावेद स्पेलमेन ने Gender in the context of Race and class में इस पर चर्चा की है । श्वेत -अश्वेत, संपन्न -विपन्न माताओं की अंतश्चेतना बच्चों की अंतश्चेतना पर अलग-अलग ढंग से प्रभाव डालती है । अश्वेत/ विभिन्न माताएँ अपने बच्चों को ज्यादातर जो कहानियां सुनाती हैं, वे दुखांत होती हैं - आने वाले दिनों में जो परेशानी और पराभव अन्यायपूर्ण व्यवस्था के कारण उनके हिस्से आना है, उसके लिए उन्हें तैयार करने वाली कहानियां । लेकिन समृद्ध देशों की खुशहाल, निश्चिंत माताएँ अपने बच्चों का मनोबल मजबूत करने वाली सुखांत परी कथाएँ सुनाती हैं ।

4) मार्क्सवादी/समाजवादी स्त्रीवाद – स्त्री के संदर्भ में फ्रेडरिक एंजेल्स ने "The origin of the Family, Private property and the stati" लिखा है । वे कहते हैं कि स्त्री का शोषण वहाँ से शुरू हुआ, जहाँ से बैयक्तिक संपत्ति का प्रावधान है । उत्पादन के साधनों पर जिन थोड़े-से लोगों का प्रभुत्व हुआ, वे मर्द थे और 'कार्पोरेट कैपिटलिज्म' तथा इंपीरियलिज्म के साथ मेल शावेनिज्म उन्हीं की देन है । पितृसत्तात्मक समाज के मूल में है पूंजीवाद । यदि हर वर्ग, हर समुदाय की स्त्रियों का अभ्युदय होना है - वर्ग विशेष की चुनी हुई स्त्रियों का नहीं - तो पूंजीवादी व्यवस्था ही ध्वस्त कर देनी होगी । समाजवादी व्यवस्था में किसी का किसी पर आर्थिक परावलंबन होना ही नहीं, तो स्त्रियाँ भी पुरुषों के शोषण चक्र से मुक्त हो लेंगी और तब वे किसी पुरुष से अपना संबंध जोड़ेंगी तो उस वरण को परिसीमित और कलंकित करने वाला कोई आर्थिक आधार नहीं होगा ।

सोसलिस्ट फेमिनिस्ट नहीं मानते कि औरतों का कामकाजी होना ही उन्हें पुरुषों के समकक्ष बना देगा । मार्क्सवादी फेमिनिस्ट मानती हैं स्त्रियों की इस दुर्दशा की जिम्मेदार उत्पादन की संरचना (Structure of production) है । हीदी हार्टमेन (The unhappy Marriage of Marxism and F) में कहते हैं - ''वर्ग, रिजर्व आर्मी आफ लेबर, वेज लेबर आदि अवधारणाएँ इसकी व्याख्या नहीं कर पाती कि स्त्रियां अधीनस्थ कैसे हुई । जो रिश्ता मजदूरों का पूंजीपतियों से होता है, कमोबेश वही रिश्ता स्त्रियों का पुरुष से होता है ।

साधनों का नियंत्रण स्त्रियों पर दलबद्ध नियंत्रण का स्रोत बनता है । क्योंकि पूंजीवाद और पितृसत्तात्मक समाज का गठबंधन पुराना है । कई बार ऐसी स्थिति हो जाती है - स्त्रियों के बारे में पितृसत्तात्मक समाज और पूंजीवादी शक्तियों का स्वार्थशोधक संबंध अलग-अलग ढंग से विकसित हो जाता है । जैसे -I9वीं सदी में इंग्लैंड का मजदूर यूनियन चाहता था कि उनकी स्त्रियां घर में रह कर उनकी अधिकाधिक देखभाल करें, शाम को वे थक कर घर लौटें तो चायपानी के साथ इंतजार करती मिलें, जब कि पूंजीपति निकाय चाहता था कि उनकी स्त्रियों के सिवा और सारी स्त्रियां बेजलेबर बाजार का हिस्सा बनें ।

पूंजीपतियों ने सामधान निकाला - पूरे परिवार के लिए 'फैमिली वेज' देने लगे । उनका तर्क था -पत्नी -बच्चे घर पर रहेंगे तो श्रमिकों का शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य सुधरेगा, वे परितृप्त भी रहेंगे । एक बार तृप्ति देकर उन पत्नी -बच्चों को कम मजदूरी पर भी बाजार में खींच सकते हैं । क्योंकि सुविधापरस्ती एक बार रक्त में आ गई, तो निन्याववे का फेर वैसे भी लग जाता है । इस प्रकार घर के सिवा काम के स्थान पर स्त्रियों का दर्जा बदला - ज्यादा तनखावाली महत्वपूर्ण जगह पर पुरुष स्थापित हुए । कम तनख्वाह वाले काम स्त्रियों पर आ गए । अमरीका में औसत कार्यक्षेत्र में स्त्रियों की प्रति व्यक्ति .69 डालर की कमाई पर आज भी पुरुष एक डालर कमाते हैं । कई सर्वेक्षणों में से यह सामने आया है कामगार स्त्रियों के पति की अपेक्षा घर में रहने वाली स्त्रियों के पति घरेलू कामकाज में ज्यादा मददगार साबित होते हैं । इसमें मनोविज्ञान यह है - वे वहाँ अपना प्रतिद्वंदी नहीं देखते, पूरा अपने अधीन देखते हैं । खिलाएंगे तो खायेंगी, नहीं खिलाएंगे तो भूखी मर जायेंगी - इस करुण तथ्य से ही उनके अहं की पुष्टि बेहतर होती है ।

हर्टमेन कहते हैं - स्त्रियों की लड़ाई के मोर्चे दो होने चाहिए - पितृसत्तात्मकता से घर में, और पूंजीवादी ताकतों से बाहर - याने 'बराबर मजदूरी की बराबर पगार' और 'तुलनीय काम की तुलनीय पगार' - दोनों जरूरी है ।

गरीब परिवार तीसरी दुनिया के देशों में ज्यादातर स्त्री-मुखिया के अधीन चलते हैं । अत: उन्हें भरपूर मजदूरी के अलावा शैक्षिक, कानूनी और चिकित्सकीय सहायता भी समय-समय पर मिलती रहे

तो एक सम्मानजनक स्वतंत्र जीवन जीने में मदद मिलेगी ।

5)पोस्टमार्डर्न फैमिनिज्म – उत्तर आधुनिक मान्यताओं के मूल में केंद्र बहुलता है वर्ग, नस्ल और संस्कृतियों के अनुसार स्त्री का अनूभूतिमंडल बदलता रहा है । किसी एक केंद्रीय, सतत, ठोस सत्य की उद्घोषणा स्त्री संदर्भ में भी असंभव है - पितृसत्तात्मक व्यवस्था ही सामान्यीकरण का दम भर सकती है । क्योंकि उसे बातों की सूक्ष्म तरंग पकड़ने का अभ्यास नहीं रहा । द्विपद विलोमों की शृंखला खड़ी कर रखी है । उन्हीं खानों में फिट करके वह चीजों को तोलती -परखती रही । ऐसे द्विपद विलोमों की सूची -

पुरुष	-	स्त्री
सजग	-	सुस्त
संस्कृति	-	प्रकृति
दिन	-	रात
ऊँचा	-	नीचा
लिखित	-	मौखिक

इस सूची से स्पष्ट है द्विपद में एक उच्चाशय तो दूसरा निम्नाशय है । एक मूल है - दूसरा उसकी विकृति । प्रति कृति है । स्त्रियों की मान्यता अभी भी दोयम दर्जेवाली चीजों में है । भाषा-पितृसत्तात्मक समाज की भाषा - उनके साथ न्याय नहीं करती, उनके प्रति पूर्वग्रह रखती है, इसलिए स्त्रियों को चाहिए कि भावात्मक द्वारा भाषा की सरहदें तोड़े । उनका मानना है कि पुरुष अपने पूर्वग्रहों और बासी तथ्यों को लेकर एकपक्षीय कुछ लिखते हैं । स्त्रियों का लेखन भी उनकी यौन-तंत्रियों की तरह भांति-भांति की झंकृतियों से भरा हुआ है, दूध की रोशनाई से उत्कीर्ण वैविध्यपूर्ण और प्रवाहपूर्ण होता है ।

1.3 भारत में स्त्री केंद्रीय आंदोलन :

भारतीय भूखंड में स्त्री केंद्रीय आंदोलन प्रेम जैसे भोलेपन में हो गए - न कोई प्रयोजन बना, न कोई मेनिफेस्टो बना, न कोई प्रकट और सचेतन पूर्वपीठिका बनी । जो होना था, बहुत सार्थक, बहुत क्रांतिकारी, दूरगामी प्रभावों की ओर प्राय: अचेत पश्चिम में जैसे महिला मताधिकार पर हुआ वैसा कुछ प्राय: नहीं मिलता । राधाकुमार लिखती हैं -

"The contemporary porons Indian women's movement do not fall under the rubric of one movement and indeed the women who engaged in some of these companies did not regard themselves as part of overreaching women's movement." अध्ययन की सुविधा के लिए इन्हें चार चरणों में रखा है - यह मुख्यत: स्वातंत्र्योत्तर भारत का चित्र है ।

प्रथम चरण – 1947 ई. में आजादी के कुछ दिन पहले पेशावर में मुसलमान स्त्रियों ने मताधिकार की मांग की । बड़ी संख्या में इकट्ठा हुई । संविधान जब बनने लगा तो उन्हें पूरी तरह समान अधिकार दिया गया । अनेक महत्वपूर्ण पदों पर सरोजिनी, अरुणाजी, विजयलक्ष्मी आदि महिलाएँ अवस्थापित की गई ।

1960 में शारदा आंदोलन चला । लोकगीत गानेवाली टोलियां भक्तिगीतों में जागरणगीत गाती रही । भीलों की पीड़ा सुलगती रही । बाढ़, सूखा, भूमिहीनों की पीड़ा गूंजने लगी । गांव-गांव में जाकर भूमिपतियों के मनमाने उपज बंटवारे, नृशंस सूदखोरी के खिलाफ आक्रामकता बढ़ी । शराब के अड्डे जलाये ।

1972 में गांधीवादी समाजवादी गुजरात में पहले स्त्री ट्रेड आंदोलन का गठन हुआ । टेक्सटाइल लेबर एसोसियेशन (TLA) की महिला शाखायें खोल कर सक्रिय आंदोलन चला ।

1973 में नारी नेता मृणाल गोरे और अहल्या रांगणेकर ने मूल्यवृद्धि के खिलाफ महिला मोर्चा गठित किया । घेराव, प्रदर्शन कर फिक्स्ड प्राइस शाप, कंज्यूमर प्रोटेक्सन कानून आदि की मांग की ।

1974 में गुजरात में 'नवनिर्माण' नाम से आंदोलन चला । भ्रष्टाचार, कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठायी । स्वांग -अदालत (मॉककोर्ट) आदि हुए । हैदराबाद में प्रोग्रेसिव आर्गनाइजेशन आफ वीमेन(POW) बना । पत्नी प्रताड़ना पर आवाज उठायी ।

1975 में यूएन ने महिलावर्ष घोषित किया । देश भर में स्त्रीवादी संगठन बने । महाराष्ट्र में अधिक । पूना-बंबई में संगोष्ठियाँ आयोजित हुई । आंदोलन तेज हुआ । दलित और महिला आंदोलन एक छतरी के नीचे आ गया । दलितों ने महिला समता सैनिकदल' बनाया । धर्म-जाति लेकर पूर्वग्रहों पर प्रश्न चिन्ह लगाया ।

दूसरा चरण – ट्रेड यूनियन , किसान समीति आदि की अलग स्त्री -शाखायें खुली । ये तो साम्यवादियों से जुड़े थे । परंतु कुछ स्त्री संगठन राजनीति से हट कर बने । इन्होंने शहर, कस्बों में 'महिला दक्षता समिति' बनायी । लंबी बहस चली कि राजनीति से जुड़े या नहीं ?

आंध्र में करीमनगर के महिला संगठन प्रभावी थे गांव-गांव में महिला संघम् पत्नी प्रताड़ना और भूपति -बलात्कारों के विरुद्ध खड़े हुए । दिल्ली में 'स्त्री विमर्श', 'महिला रक्षा समिति' आदि बहुत मुखर हो कार्य रत थी । पारिवारिक मामले सुलझाये । नुक्कड़ नाटकों से सचेतनता पैदा की । दहेज का विरोध चला ।

I983 में क्रिमिलन लॉ (सेकेंड अमेंडमेंट) एक्ट पास हुआ । एविडेंस एक्ट का सेक्शन II3ए संशोधन किया । I74 में संशोधन कर विवाह के सात वर्ष में मरने वाली स्त्रियों की शव परीक्षा अनिवार्य हुआ ।

दहेज अब भी पीड़क तत्व था । संपत्ति में हिस्सा बड़ी समस्या था । इन सब पर चर्चा हुई । कानून बने ।

बलात्कार तेजी से बढ़ा । गांव-शहर, नौकरी स्थान, घर, सड़क सब जगह यह भयावह बात होने लगी । पुलिस बलात्कार के विरुद्ध हैद्राबाद में आंदोलन हुआ । I978 में । जमींदार और नौकरीदाता भी कम दुष्ट नहीं थे । इन के खिलाफ आंदोलन चला । I980 ई. में हरयाणा में मायात्यागी को पकड़ा पुलिस द्वारा बलात्कार, नंगी कर फिराना आदि ने उत्तेजना फैला दी । बागपत जाकर जैलसिंह को जांच करनी पड़ी ।)

तीसरा चरण – I980 के बाद कानूनी सलाह, स्वास्थ्य संबंधी सलाह रोजगार पर नये ढंग से दी जाने लगी । नारी संगठन सक्रिय हुए 'सहेली' , 'सखी' केंद्र बनाये । I985 में लोकगीत, लोकमंच, लोकचित्र, आदि पर कार्यशालायें हुई ।

वन संरक्षण के नामपर गढ़वाल की स्त्रियों ने गांधीवादी आंदोलन छेड़ा - पेड़ से चिपक जाती । प्रकृति के संरक्षण कार्य में खूब जुटी ।

8वें दशक में नारी संगठन बहु आयामी बना । सेंटर फार वेमन डेवलमेंट (CWD) खुले । उधर महाराष्ट्र आदि में गर्भ निरोध पर हिंदु महिलाओं -मुलिम महिलाओं में भेद पैदा किया - कि सिर्फ हिन्दू महिला गर्भ निरोध रखती हैं । उसी तरह सती प्रथा पर दिल्ली, राजस्थान, बंगाल में जागरण हुआ । कोई 'हक' के समर्थन में, कोई विरोध में चला । रूपकुंवर सती ने देश को हिला दिया ।

चौथा चरण – चौथा चरण शाहबानो सारी दुनिया में फैला । बेसहारा स्त्री के हित संरक्षण की आवाज चारों ओर उठी । कानूनी लड़ाई में शाहबानो को कुछ न मिला । पर देश सचेत हुआ । कहा

गया कि सभी पर्सल लॉ स्त्री विरोधी हैं

"Religion should only govern the relationship hetween a human bcing and God and should not govern the rlationship bitween men and man or man and woman." इधर पिछले दिनों रेप और फिर हत्या की घटनाओं ने जघन्य भाव से बढ़ कर स्थिति बदल दी । कानून बने पर खास सुधार नहीं आया । सुरक्षा -असुरक्षा की बहस जारी है । कहा जा रहा है - नारी स्वयं सशक्त हो । हिम्मतवान हो तभी इस हिंसा का सामना कर सकती हैं ।

1.4 हिन्दी कथा साहित्य में नारी :

राजनीतिक -सामाजिक स्तर पर नारी अस्मिता की स्थापना और गरिमा के लिए काफी प्रयास हुए । नारी का सुखद भविष्य उसे न्याय समानता और स्वतंत्रता प्रदान बिना संभव नहीं । परंपरागत नारियों का बंधन तोड़ना जरूरी था । इसमें मुख्य मुद्दे थे - पुरुष -स्त्री समानता, शिक्षा, विवाह, नौकरी, हर क्षेत्र में राजनैतिक, व्यवसायआदि में दोनों लिंगों को समान अधिकार हो । आजादी के बाद संविधान में समान अधिकार दिया । जनतंत्र में वोट का समान अधिकार मिला ।

पर व्यावहारिक रूप में बहुत कुछ छूट गया । शोषण चला, दहेज उत्पीड़न , वेतन का तारतम्य रहा । पर नारी इसमें उठ खड़ी हुई ।

रामायण -महाभारत में नारी के साथ जो हुआ वह अकल्पनीय है । विलास की साधन बनी । उसे अबला कहा गया । सतीत्व की परीक्षा और सती -असती के मानदंड पुरुष -स्त्री समाज में भिन्न-भिन्न हुए । इस तरह नारी समाज में हाशिये पर आ गई ।

हिंदी साहित्य में वीरगाथा युग में वह इज्जत और प्रतिष्ठा का प्रतीक बनी । अत: उस पर बंदिश लगी । सती, बहु विवाह, अंध विश्वास आदि कुरीतियाँ नारी जीवन को संकट में ले गयी । सबसे बड़ा संकट था सती प्रथा का । नारी को पति के साथ चिता पर बैठा दिया जाता । पति नहीं तो स्त्री भी नहीं । इस दकियानुसी प्रथा का खंडन किया राजामोहन राय ने । फिर भी यह प्रथा आज भी चोरीछिपे चल रही है । हमारा समाज इसे धर्म का नाम दे देता है । लेकिन भक्तिकाल में अवहेलना भी झेली । उसको द्वितीय दर्जे का इंसान कहा । जब कि रीतिकाल में आकर नारी मांसलता प्रमुख हो गई । भोग्यता रूप ही ज्यादा चित्रित हुआ । दरबारी और सामंती युग में नारी की महिला उसके सौन्दर्य , उसकी मांसलता अथवा कला रूप पर निर्भर करने लगी ।

परंतु आधुनिक युग में परिवर्तन होता है । सती प्रथा का अंत, विधवा विवाह, बाल विवाह पर प्रतिबंध, शिक्षा का प्रचलन आदि क्रमबारी सुधार चले । नारी की स्थिति में जबरदस्त सुधार आया ।

अत: भारतेंदु हरिश्चन्द्र के साहित्य में नारी के बदले रूप की तस्वीर उभर कर आने लगी । 20वीं सदी के प्रारंभ में गांधीजी ने सुधार की आवाज उठायी । वह मुख्यधारा में जुड़ती है । स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया । महिला रचनाकारों ने इसे अनदेखा नहीं किया । प्रेमचन्द ने नारी शोषण का विरोध किया । नारी का सबल रूप चित्रित हुआ । कुछ ही समय में जैनेन्द्र ने परंपरागत नारी की मूर्ति का भंजन किया । घर परिवार पति के बंधनों से मुक्त करने प्रोत्साहित किया । माँ-पत्नी, पुत्री से हट कर नारी का अस्तित्व क्या हो, इस पर विचार किया । जैनेन्द्र कथा साहित्य में नारी के 'मर्यादा' की बात कह शोषण से मुक्त किया ।

I947 के बाद नारी घर से निकली । स्कूल, कालेज, बजार, दफ्तर गई । सामाजिक स्थिति बदली पर नई समस्यायें आयी । घर-बाहर दोनों जगह पुरुष वर्चस्व के खिलाफ खड़ी हुई । फिर भी हार नहीं मानती । संघर्ष और साहस से बदले परिवेश को स्थापित किया । इस नई कहानी की पात्र पुराने मूल्यों, जंजीर, रूढ़ियों, आधुनिक सभ्यता के तथाकथित अधिकारों में बदलते संदर्भ में नारी की स्थिति उभरी । इनमें कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नु भंडारी, प्रभाखेतान, उषा प्रियम्बदा, मैत्रेयी पुष्पा को महत्व दे सकते हैं ।

बीसवीं सदी के छठे दशक के शेष में विद्रोह और तीखा होता है । संयुक्त परिवार प्रथा के विभिन्न पक्षों पर सवाल उठाये गये । राजेन्द्र यादव से नारी चेतना के संकेत रूप दिये । संयुक्त परिवार कुचलना चाहता है, पर संभव नहीं होता ।

अब वह 'माँ' तक की पत्नीत्व की उपेक्षा करती है । मन्नू जी कहती हैं - आज की 'मैं' इतनी निर्बल और निरीह नहीं कि मुझे जीवन बिताने के लिए कोई सहारा चाहिए ।'' इस युग में वह अपनी ताकत पहचान रही है । विवाह संस्था की मोहताज नहीं रह जाती ।

कामकाजी महिला घर का दायित्व लेकर भरण-पोषण करती है । पर वह जो चाहती है वह भी करने की इच्छुक है । कमलेश्वर ने नगरीय परिवेश की पर लिखी नारी की विद्रूप, विसंगतियों और समस्याओं पर प्रकाश डाला । 'काली आंधी' में पत्नी राजनेता बनकर पति और संतान का साथ नहीं निभा पाती । 'तलाश' कहानी भी विधवा, कामकाजी है, पर मानसिकता और शारीरिक स्वतंत्रता में अपनी पुत्री बाधक बनती है । अंदर घुट रही है, लाचारीवश व्यक्त नहीं कर पाती । नैतिकता उसके कदम रोक लेती है ।

इस प्रकार उषा प्रियंबदा और कमलेश्वर की नारी आर्थिक आत्म निर्भर है, व्यक्तित्व के टकराव से समस्या बन जाती है । दोहरी भूमिका निभाती है ।

बाद में प्रभा खेतान की कथा में विद्रोह और तीव्र है ।'' छिन्नमस्ता' में वह रूढ़ियां तोड़,

सजावट नष्ट कर आत्मनिर्भर सफल कार्यशील महिला बन कर उभर रही है । ग्रामीण परिवेश से सामाजिक जागरण का दायित्व लेती है । मैत्रेयी पुष्पा का 'इदमन्नम्' की नायिका सीमित साधनों के बावजूद भारतीय शैली में जीवन की सार्थकता तलाशती है ।

इस प्रकार आजादी के बाद नारी को पारिवारिक दायरे से बाहर निकाल सामाजिक सरोकार और जीवन के यथार्थ से जोड़ा गया । उस काल में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंबदा, मन्नू भंडारी, शिवानी, ममता कालिया और अनिता औलक प्रमुख थी । अपने सजग और सशक्त नेतृत्व में ये स्त्री संसार की जटिलताओं को व्यक्त करने में सफल रही ।

आगे चल कर आधुनिक नारी की मनस्थिति, पारिवारिक जीवन और मुख्यत: दांपत्य जीवन को लेकर कथानक रचे गए । इनमें चन्द्रिका सोनरेक्सा, मालती जोशी, प्रतिभा वर्मा, सुधा अरोड़ा मृदुला गर्ग प्रमुख हैं । ये समाज और युग के सत्य को परखती हैं ; परिधि विस्तार करती हैं । भारतीय समाज के मध्यम वर्ग की स्त्रियों का पारिवारिक समाज जीवनायुक्त लेकर चलती हैं । सूक्ष्म स्तरों पर उसे पुनर्रचित करती हैं । इनके पास भाषा और यथार्थ को व्यक्त कर सकने लायक संवेदना भरपूर है ।

विभिन्न देश, भाषा और रंगों के बावजूद गहरा इंसानी सरोकार मिलता है । उत्पीड़ित नारी जीवन की अनुभूतियों को चित्रण करने में मेहरून्निसा परवेज, नासिरा शर्मा ने काफी अविस्मरणीय कहानियाँ लिखी ।

जीवन मूल्यों, परंपरा और आधुनिकता के टकराव, नारी मन की घनीभूत पीड़ा संबंधों में दरार आदि को रूपाकार देने में सूर्यबाला, चित्रामुद्गल, चंद्रकांता का नाम उल्लेखनीय है । यहाँ पर नारी मुक्ति ही नहीं, देश और समाज की अन्य अनेक समस्यायें भी जीवंत हैं ।

ऊषा किरण खान, कुसुम अंसल, मृणाल पांडेय, अलका सरावगी, परवर्तित जीवन -स्वरूप को सही संदर्भ में अभिव्यक्ति दे रही हैं । यहाँ कथालेखन विविध वर्णी स्वरूप में आ रहा है । नारी का अपना वृत्तांत विश्वसनीयता के साथ वक्त हुआ है । इसीलिए इसे नारी का अपनी निजी प्रासंगिकता का प्रश्न भी स्वत: उत्तरित हो जाता है । वह यथार्थ को मजबूती से व्यक्त कर पाती है । व्यंग की पैनी धार में कोई संकोच नहीं रखती । उसका यह मुहावरा बिना लाग-लपेट के हिंदी कहानी में आया है ।

वैसे तो आज कई पीढ़ियां साथ-साथ लिख रही हैं । परंतु पिछले दशक में ही शामिल हुई कथाकारों, जैसे महुआ माझी(मैं बोरिशइल्ला) काफी चर्चित हुई है । इनमें आदिवासी नारियों और मुस्लिम चरित्रों का अंतर्मन तक गहराई से खोला गया है । नारी मन की कोमल संवेदना (फय नशा कालिदास) बड़ी संजीदगी से अंकित करती हैं । देह की मादकता से बंधी हैं । परंतु हलकी भावुकता से बच कर लिखने में सफल हो रही है । उधर अल्पना मिश्र दस्तक दे रही हैं । यहाँ यह महानगर तक

सीमित नहीं । कस्बे-देहात से लेकर आदिवासी और ग्रामीण परिवेश में नारी का रूप चित्रित हो रहा है । यहाँ अनेवाला राष्ट्रीय परिदृश्य भी अछूता नहीं है । अपने व्यापक अनुभव और गहन सृजन धर्मिता के बल पर नई पीढ़ी बहुत जल्द इस क्षेत्र में पहचान बनाने में सक्षम हो रही हैं ।

वास्तव में हिंदी का स्त्री लेखन एक समृद्ध परंपरा का निर्माण करने में समर्थ हुआ है । यह युवा पीढ़ी अपनी सृजनधात्री और संघर्षशील लेखन से हिंदी साहित्य को और भी समृद्ध करेगा । इसमें आत्माभिव्यक्ति के साथ-साथ आत्मसजगता का रेखांकन प्रमुख हो गया है । समाज नियंता बनने के लिए वह बहुमुखी नेतृत्व लेकर बढ़ रही हैं ।

1.4.1. स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श :

स्त्री की आजादी का प्रश्न हमारी सारी बहसों का मुख्य मुद्दा है । 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' के खयालों में केवल स्त्री को ऊंचा उठाया गया है, उसे मानवीय बनने नहीं दिया गया । उसे पूज्य भाव से सराहा गया है, मंदिरों की सीढ़ियाँ केवल चढ़ाई गई । कोरा आदर्शवादी चिंताधारा ने ही उसे अधिक रूढ़िवादी बना दिया है ।

सभी क्षेत्रों में पुरुष रचनाकारों की तुलना में स्त्री रचनाधार्मिता हाशिये पर रही है । आर्य युग में हमें नारी रचनाशीलता और मानसिकता के अनेक उदाहरण मिलते हैं गार्गी, मैत्रेयी, सीता, सावित्री, अनुसूया आदि महिला शक्ति के यशस्वी उदाहरण हैं पर बाद के इतिहास में हजारों साल तक फिर सन्नाटा दिखाई पड़ता है ।

मुश्किल से तीस-पैंतीस वर्ष हुए जब साहित्य में स्त्री विमर्श और दलित -चेतना की आहट सुनाई पड़ी है । यूरोप के अनेक देश की कई भाषाओं में महिला रचनाकारों को बड़े-बड़े पुरस्कार यहाँ तक कि नोबुल पुरस्कार तक मिले । स्त्री विमर्श भारतीय स्थितियों में और हिंदी साहित्य में पहली बार मध्यकाल में मीराबाई के काव्य और व्यक्तित्व में उभरता दिखाई पड़ता है । वह पंद्रहवीं शताब्दी की एक ऐसी विद्रोहिणी प्रतिभा थी जिसने नारी अस्मिता का एक अभूतपूर्व इतिहास रचा था । ''मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई - अब तो बात फैल गई जाने सब कोई'' तत्कालीन रूढ़ियों में जकड़े राज समाज में कितने ज्वालामुखी न फट पड़े होंगे । मीरा के कई सौ वर्ष के बाद यह स्त्री -चेतना की लहर हमें 20वीं सदी में सिर उठाती नजर आती है । यह पुनर्जागरण की लहर हमें राजा राममोहन राय और पं. विद्यासागर के स्त्री-मुक्ति प्रयासों में व्यक्त हुई । स्वतंत्रता के पहले प्रयास 1857 में इसका प्रभाव हमें महारानी लक्ष्मीबाई के विद्रोह में परिलक्षित होता है । साहित्य जगत में भारतेंदु हरिश्चन्द्र और उनकी मंडली के कई रचनाकारों ने नारी की दयनीय स्थिति पर बहुत कुछ रचा । नारी स्वाधीनता की यह आकांक्षा 20वीं सदी के तीसरे दशक में महादेवी वर्मा व सुभद्रा कुमारी चौहान दोनों की जोड़ सिद्ध हुई

हैं । कविता में रहस्यवादी निगूढ़ताओं में आनन्द लेने के बावजूद महादेवी वर्मा अपने गद्य-लेखन में स्त्री-स्वतंत्रता पर बल देती हैं । रेखाचित्रों में उन्होंने इस मुद्दे को लिया और इसका सौद्धान्तिक विवेचन 'शृंखला की कड़ियां' नामक ग्रंथ में भी किया । सुभद्राजी का राष्ट्रीय यज्ञ अनुष्ठान हिंदी में अनूठा है । जलियांवाला बाग में वसंत के प्रति कविता आज भी रक्त में उछाल लाने के लिए पर्याप्त है ।

'खूब लड़ी मर्दानी वो तो झांसी वाली रानी थी' एक समय बलिदानियों का श्लोक थी । वे हिंदी वीर काव्य शृंखला की महत्वपूर्ण कड़ी हैं । अल्पायु पायी थी । उसका अधिकांश भाग कारागार में व्यतीत हुआ था । शिवरानी देवी, ऊषा मित्रा, विद्यावती कोकिल, कमला चौधरी, होमवती देवी आदि महिला रचनाकारों ने घर-परिवार समाज और देश सभी को अपनी दृष्टि के केंद्र में रखा है । इन्होंने कभी भी अपने कृतित्व को घोषित रख नारी विमर्श की संज्ञा नहीं दी । हम अस्सी दशक में पहली बार कुछ पत्र-पत्रिकाओं में स्त्री-विमर्श और दलित -विमर्श की अनुगूंजें सुनते हैं । कविता में सप्तक परंपरा में आई कवयित्रियों में कीर्ति चौधरी, शकुंत माथुर आदि में स्त्री मानसिकता के चित्र मिल जाते हैं । रघुवीर सहाय की दो छोटी-छोटी कविताएँ 'सीढ़ियों पर धूप' संकलन में संगृहीत हैं । प्रयोग में निहित उनकी व्यंग्यात्मकता मानवीय मुक्ति की परिणति है । पहली कविता 'पढ़िए गीता' किसी मूर्ख की ही परिणति है । निज घर बार बसाए/ होय कटीली/ आँख गीली/ लड़की नीली, तबियत ढीली/ घर की सबसे बड़ी पतीली/ भर कर भात पसाहिए । दूसरी कविता है 'नारी' नारी विचारी/ पुरुष की मारी/ तब से क्षुधित/ मन से मुदित/ लपक कर झपक कर/ अंत में चित'' बोधिसत्व की कविता का शीर्षक है 'वहाँ औरत' । औरत की रची-बसी जिन्दगी की अन्दरुनी स्थितियों की कवि की सूक्ष्म दृष्टि गई है :-

वहाँ औरत बरतन मांजकर/ लेऊ लगा रही है / वहाँ औरतें धो और सुखा रही हैं केश. गूंथ रही हैं चोटियाँ, भर रही हैं पांव/ लेप रही हैं दु:ख के गलके पर/ नोना माटी । पूछ रही हैं कुशल क्षेम । वहाँ औरतें, लड़ रही हैं । कर रही है विलाप, बच्चों की खातिर जो चले गए हैं कहीं । वहाँ औरतें/ बहा और पोंछ रही हैं आंसू । देवी प्रसाद मिश्र ने स्त्री की स्वतंत्रता को सामाजिक प्रतिमान के संदर्भ में देखा है 'औरत का हालचाल' शीर्षक कविता में 'एक सर्विल युवती/ मैली कुचैली साड़ी में लिपटी । औरत प्रकट होती है । वह कोशिश करती है कि सरलतम हिंदी में अपने पति के बारे में/ अधिक से अधिक बातकर / वह अपने होने को अर्थवान करे । उनकी एक और कविता 'औरतें यहाँ नहीं दिखती ' जिसमें हमारी नैतिकता सिमटती-सिकुड़ती है : - औरतें यहाँ नहीं दिखती/ वे आटे में पिस गई होंगी । या चटनी में पुदीने की तरह 'महक रही होंगी/ वे तेल की तरह खौल रही होंगी उनमें' घर की सबसे जरूरी सब्जी पक रही होगी ..... स्त्री की बेबसी ।

शकुंत माथुर के कविता - संकलन 'लहर नहीं रहूंगी' की कविता 'जी ले ने दो' जिसमें नारी की

अस्मिता की तलाश पहचानी गई है : जी लेने दो/ मुझे/ वह कोरा अर्थ/ मेरे लिए अपना है/ रख लेने दो मुझे/ वही मेरे पास/ जो नितान्त मेरा अपना है/ पी लेने दो वह/ वह चाह/ वह रस/ जो मेरे लिए अच्छा है । संचित कर लेने दो वह/ जो/ घूम रहा नस-नस में/ हर धड़कन में जीवन/ जिसको जीकर मैं जान सकूं/ मैंने भी कुछ/ अपनी तरह जिया है ।'' समकालीन कविता के महिला लेखन के परिदृश्य में कात्यायनी का नाम भी महत्वपूर्ण है । कविता संकलन 'सात भाइयों के बीच चंपा' है कात्यायनी में नारी की अदम्य इच्छा है जो उन्हें पुरुष खे मे में नहीं धकेल देती । इस कविता में चंपा सिर्फ एक युवती होकर भी संवेदनात्मक धरातल पर नारी दृष्टि का प्रतीक बन जाती है ।

सात भाइयों के बीच सहानी चंपा/ एक दिन घर की छत से/ लटकती पाई गई/ तालाब में जलकुंभी के जालों के बीच/ दबा दी गई/ वहाँ एक नीलकमल तैर गया/ जलकुंभी के जालों से ऊपर उठकर/ चंपा फिर घर आ गई/ देवता पर चढ़ाई गई ।

1.5 अन्य भाषा : ओड़िया कथा साहित्य में नारी विमर्श :

ओड़िशा की उसकी अपनी स्थिति पिछले लंबे अर्से तक विडंबनामय रही है । 1803 ई. में अंग्रेजों ने बलपूर्वक ओड़िशा के उपकूली भाग का शासन अपने कब्जे में कर लिया । बाकी का हिस्सा रजवाड़ों के अधीन छोड़ दिया । वहाँ ब्रिटिश हुकूमत का प्रतिनिधि रहता । इस प्रकार उत्कलीय जनता शासन की दृष्टि से अंग्रेजों और देसी रजवाड़ों का- दोहरा शासन 1947 तक चला ।

जनजीवन की दृष्टि से देखा जाय तो यहाँ की जीवन प्रणाली एक ओर वनवासी - गिरिजन (जिन्हें आदिवासी समाज कहते हैं) समाज के लोग हैं । ये प्रकृति से जुड़े हैं । वही जीवन और जीविका उपलब्ध कराती है । दूसरा समाज है तथाकथित सभ्य समाज । जो भारतीय आधुनिकता के दौर में शामिल है । यहाँ के व्यवहार, चाल चलन, परंपरा किसी भी आधुनिक भारतीय क्षेत्र की तरह मिलते हैं ।

परंतु, इन दोनों में एक चीज समान है : श्रीजगन्नाथ के प्रति अटूट आस्था और विश्वास । युगों से आदिमतम आदिवासी (बोंडा) से लेकर आधुनिकतम कटक - भुवनेश्वर - राउरकेला - बालेश्वर के आदिवासी इनसे अपने जीवन को जोड़े हैं । इस प्रकार जीवन में परंपरा के प्रति आग्रह, धरती से जुड़ने का मोह, जीवन में क्रमाधुनिकता का प्रवेश आदि बातों को समझना और उनके पीछे मूलाधार जानना सहज हो जाता है ।

नारी को लेकर आद्याभास ओड़िया कथासाहित्य के महारथी फकीरमोहन सेनापति में मिल जाता है । 'रेवती' कहानी में ग्राम जीवन में मास्टर पढ़ाने जाते हैं और वहीं रेवती भी पढ़ना चाहती है,

कुछ पढ़ती है - दादी विरोध करती है । गांव में हैजा से पिता-माता की मृत्यु, पर दादी इसके लिए रेवती की पढ़ाई को दोषी कहती है, अंत में स्कूल मास्टर की भी हैजे से मृत्यु हो जाती है । दादी के शब्द 'लो रेवी, मुँह जली, आग जली' आदि में दादी का यह अंधविश्वास बार-बार फूटता है कि स्त्री शिक्षा (यह कहावत हर प्रांत में प्रसिद्ध है कि दोनों कलम चलना अशुभ है ।) यह ठीक है कि एक पढ़ाई करे और एक गृहस्थी सम्हाले) अशुभ है - रेवती खेद में भरी बीमार हो, मर जाती है ! मगर वह गूंज-अनुगूंज ओड़िया कथा साहित्य में बराबर पिछले 110 वर्ष से हर कथाकार को जगाती रही है ।

इस धारा में 'मने-मने' के रचनाकार वैष्णव दास, वासंती के 'सवुजन', उपेन्द्र किशोर का 'मलाजन्ह' जैसे तीन उपन्यास समाज में लैंगिक समता की बात खुल कर या एकालाप में एकांत में करते हैं । यहाँ नारी के प्रति अन्याय पर इनमें मौन प्रतिवाद का स्वर सुन पाते हैं । हरे कृष्ण महताब के 'प्रतिभा', नित्यानन्द महापात्र के 'हिड़माटी' एवं 'भंगाहाड़' में नारी जीवन का उत्थान - पतन सशक्त ढंग से आया है

पचास बरस बाद (1946) गोपीनाथ महांति ने 'परजा' (एक आदिवासी जनजाति) उपन्यास में कोरापुट के अंधेरे पर्वतीय मुल्क की आत्मा को पहली बार झांका । बिली और जिली दो निरीह वनवासी बालाएँ घर में अकेली रह जाती हैं - (बाकी सब बंधुवा गए थे) संघर्ष करती हैं - एक बिली पारंपरिक रूप में आदिवासी प्रथा में नंदीबाली से विवाह कर घर बसाती है । जब कि जिली घर से कदम बाहर निकाल सड़क बनाने के काम में शामिल होती है । पीछे नहीं मुड़ती । दूसरा कदम रामचंद्र बिशोयी के घर पहुँचा देता है । जमींदार जमाने के पक्के षडयंत्रकारी का वह कैसे मुकाबला करती ? हालांकि पिता, भाई छूट कर आते हैं । न्याय मांगते हैं, पर धक्के खाने पर वे बिफर जाते हैं । जमींदार को गाजर-मूली की तरह काट डालते हैं । इतनी दूर बढ़ आयी जिली देख अंदर भाग जाती है । गोपी बाबू ने 'रेवती' को कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया ! पहाड़ से उतर नई धरती पर उतरी है । अंधविश्वास, परंपरा सब का सामना करती है । आगे 'माटीमटाल' में वही ग्राम बाला 'छवि' नये रूप लेकर आती है । महाप्रलय की बाढ़ झेलती है । छबि उस प्रलय धर्षित धरा पर नवनिर्माण के लिए आगे बढ़ रही है ! गोपी बाबू का 'नारी - पुरुष' संबंध सहयोग , स्नेह एवं समानता पर आधारित है । इस प्रकार का आदर्श ज्यादा दिन नहीं टिकता ।

गोपी बाबू के उपन्यास 'दानापानी' में नारी का अलग ही रूप प्रदर्शन किया है । आधुनिक युग में पुरुष तेजी से भागता है, इस होड़ में पुरुष भोली-भाली नारी को आगे कर ऊपर उठना चाहता है और स्त्री भी साथ भागने को बाध्य है । इस दानापानी की चिंता में दोनों कक्ष च्युत हो रहे हैं । परंतु नारी जीवन की विडबंना का जीवंत चित्र आगे चल कर स्वयं नारी कर रही है ।

स्वतंत्रता के बाद की लेखिका वीणापाणि महांति, मनोरमा महापात्र और प्रतिभा राय अग्रणी

भूमिका निभाती हैं । नारी की अंतश्चेतना में उठ रहा द्वंद और बाह्यजगत में चल रहा संघर्ष दोनों पर इन लेखिकाओं को अच्छी पकड़ है । गोपी नाथ के उपन्यास में जिसे तीन मर्द कुल्हाड़ी से काट कर ढेर करते हैं, वीणापाणि की औरत उसी प्रकार के मर्द को शकुंतला पत्थर से मार कर ढेर कर देती है ! उसमें कोई आवाज नहीं, कोई साक्षी नहीं । जब खड़ी होकर एक पत्थर फेंकती है - अत्याचार का पुतला धराशायी हो जाता है - पत्थर मार कर उसे मिटा देना चाहती है ! लोगों ने समझ लिया कि नारी अबला है, सर्वंसहा है, कठपुतली है (बकौल उपन्यास 'कुन्ती, कुन्तला और शंकुतला') । वह उसकी सहनशीलता है । इसे जब कायरता की संज्ञा दी जाती है, वह एकदम सीधी होकर पत्थर फेंक उस दानव का मुकाबला कर रही है ! ओड़िया नारी की आंतरिक छवि में छुपा यह स्वाभिमान, आत्मबल एकदम रात के सन्नाटे में फूट कर निकलता है !

वीणापाणि महांति की कहानी एवं अन्य उपन्यास में नारी के प्रति अत्याचारों का चित्रण मिलेगा । उनमें नारी के शोषण से लेकर प्रतारणा तक विभिन्न चित्र भरे हैं । यहाँ पर वह 'रिफ्यूज' करने की स्थिति में है । इन प्रसंगों में वह कोई समझौता नहीं करना चाहती । परंतु पुरुष-प्रबलता के कारण उत्पन्न लाचारी मिल रही है । उपन्यास में वीणापाणि ने नारी को इससे ऊपर उठाया है । सदियों से बेड़ी में जकड़ी की तरह पड़ी लज्जा जब झटकती है तो वह झनझना कर काच की किरच-सी बिखर जाती हैं । अदम्य आत्मविश्वास में खड़ी दिख रही है - सारे अंधकार में भी चमक रही है ! इसी परिदृश्य में डा. प्रतिभा राय का कथा साहित्य देखते हैं - वहाँ नारी संबंधी दृष्टि एक भिन्न मोड़ लेती है ! 'द्रौपदी' ('यज्ञासेनी' उपन्यास का हिन्दी रूपांतर) में नारी परंपरा के सामने खड़ी है । एक भारतीय नारी होकर द्रौपदी पांच पतियों को अपनाने की विवशता के विरुद्ध विद्रोही मन की प्रतिक्रिया है । अतीव सुन्दरी नारी के मन की अनुभूति, उसकी मानसिकता तथा दृष्टि को व्यक्त किया गया है । द्रौपदी एक ओर कर्ण जैसे वीर की प्रसंशक है, परंतु उसके अन्याय के समय मौन रहने को क्षमा नहीं कर पाती । कृष्ण जैसे समर्थ पुरुष को 'सखा' रूप में वह मरते क्षण तक नहीं भुला पा रही ! उसकी पीड़ा, सारा खेद, पाती में उभर कर आता है । महाभारतीय कथानक (मिथकीय रुढ़ियों के कारण) में बंधा होने के कारण द्रौपदी उतनी बहिर्मुखी नहीं हो रही । परंतु प्रतिभा राय ने अहल्या का जीर्णोद्धार किया तो वहाँ काफी कुछ अवसर था । नारी प्रेम का प्रसंग, मातृत्व, सेक्स एवं ऐसी विभिन्न परिस्थितियों में अहल्या खूब खुल कर बोलती, भाग लेती है । (महामोह उपन्यास) अहल्या का जीवन और चरित्र भारतीय मिथकीय परंपरा को तोड़ते हुए 'सतीत्व' के प्रश्न का सीधा सामना कर रहा है - देवराज इंद्र को देहदान के मुद्दे पर प्रतिभा की दृष्टि काफी बोल्ड और अत्याधुनिक हो गई है । नारी का अंतर्बाह्य अपनी बात कहने और अपने मन को आगे बढ़ाने में समर्थ है । उसमें पारंपरिक लिजलिजापन या घुटन नहीं है । प्रतिभा राय की 'आदिभूमि' और बाद में 'मग्नमाटी' में नारी के साथ नया रूप आया है । बोंडा वनवासी नारी अपने से

बहुत छोटे वर के साथ जीवन आरंभ करती है । वर जब बड़ा होता है, तब वह अधेड़ (अथवा बुढ़ापे) के दिन काटने को बाध्य है । उम्र के दोनों पड़ाव पर नारी की विडंबना भरी स्थिति उभर कर आयी है । परंतु यहाँ भी नारी पत्नी पुरुष को बड़ा करती है और अधेड़ होकर भी सलप के नशे में धुत पति का घर स्वयं सम्हालती है । नारी की यह सकारात्मक भूमिका उस आदिम समुदाय में अद्‌भुत जीवन क्षमता (नारी के जरिये) प्राप्त कर पाता है । परंतु समुद्र तटीय जीवन में 'मग्नमाटी' में नारी समस्या को विशेष महत्व न देकर महावात्या, धरती छोड़ आये विदेशी जीवन का संकट आदि समस्याओं पर विशेष प्रकाश डाला गया है । नारी की लिंगगत भूमिका से हट कर मानुषी धरातल पर ही प्रस्तुत किया गया है । संघर्ष का मुद्दा मुख्यत: जीवन, जमीन और समाज है जो प्रकृति, पालिटिक्स एवं परंपरा (संकीर्ण) से क्षरित हो हो रहा है ! वैसे शांतनु कुमार आचार्य का 'शकुतला', और महापात्र नीलमणि साहु का 'तामसी राधा' उपन्यास नारी चरित्र आधारित कथानक पर प्रसिद्ध कृतियाँ हैं । पर उनका मूल मुद्दा नारी को लेकर नहीं है । नित्यानन्द महापात्र का 'घरडीह' पति परदेश जाने के बाद नारी की एकाकी संघर्ष गाथा तो है पर मूल घर की जमीन है, नारी नहीं । ऐसी अनेक कृतियाँ पार करते हुए ज्योत्सना राउतराय तक पहुँच जाते हैं । 'पराजित साम्राज्ञी' में सुदर्शना रिटायर्ड प्रो. की कन्या है । पढ़ी-लिखी (एम.ए.) लड़की राघवन की पी.ए. बनती है । वहीं शुभंकर पटनायक के संपर्क में आती है और उसके करीब होती जाती है । यद्यपि घर का दायित्व उस पर है, पर तय कर लेती है कि मुझे घिसी-पिटी परंपरा में नहीं बढ़ना, और चूड़ी-सिंदूर वाली बहू नहीं बनना । अत: शुभंकर से संपर्क में कोई गलत नहीं । अपने जड़ चौखटे से मुक्ति चाहती है । इसी बीच वह संभावनामयी बन जाती है । इंटरव्यू में शुभंकर चेयरमेन होता है जहाँ तपु(उसका छोटा भाई) नौकरी पा जाता है । पूरा परिवार इस सफलता पर खुश है । मगर सुदर्शना नहीं । क्योंकि वह शुभंकर के उपहारों पर कभी नहीं रीझती । उसे नारी का सम्मान और मर्यादा चाहिये था, वह उससे नहीं मिला । इस बात का उसे खेद है । आइ.ए.एस. न सही, पी.ए. भी मर्यादा पूर्वक नहीं बन पा रही । अत: समझ जाती है ''यह पिटी-पिटायी जिन्दगी जीते-जीते ऊब चुकी हूँ ।'' अपनी कामनाओं को दूसरों के लिए कुरबान करते चलना ही जिन्दगी है ? वह स्कूल मास्टरनी बन जाती है । नारी मन की आकांक्षा और उस पर प्रत्यक्ष प्रहारों से धराशायी होने की व्यथा कथा जरूर है, पर वह साहस पूर्वक लीक से अंधी हो कर बंधी नहीं रह पाती । पूर्व निश्चित वृत में चक्कर काटने से इनकार कर देती है । सारे झूठ-फरेब की पर्त उघाड़ कर उन्हें पहचानने में समर्थ है ।

उन्हीं दिनों वरिष्ठ कथाकार किशोरी चरण दास रचित 'सात दिन की सती' सामने आती है । यहाँ भी अनूपमा की पहली शर्त है - जीवन में अपनी मर्जी का जीना चाहती हूँ । स्वयं मध्यवित परिवार की है, विवाह सम्पन्न घर में होता है । अनुपमा का विचार है - ''सही -गलती शादी कर लेने पर मैं प्रकृति की दासी नहीं । माँ बनने का वैसा लोभ नहीं ।'' वह शादी कर जहाँ जा रही है उसका भीतरी

सच जान रही है । वह अपनापन , निजीत्व और अपनी स्वतंत्रता कायम रखने हेतु अभिनय कर रही है । पति तो वर्णन सुनते - सुनते सो जाते हैं - ऐसे में वह उनसे क्या सुख की आस करे ? वह नई जिन्दगी को माप रही है । अनुपमा न चाह कर भी अमेरिका जाती है । समाज सेवा का मुखौटा वाले गोविन्दजी के संपर्क में आकर भी वही निराशा हाथ लगती है । वह जिनकी दया, सहानुभूति अनुपमा पा रही है, वह सब और कुछ हो चाहे, प्रेम नहीं । अत: अनुपमा अंत तक आत्मविकास पथ पर स्वयं को एकाकी महसूस कर रही है । 'सात दिन की सती' की यही विडंबनापूर्ण नियति है ।

नारी मन की अंधी गहराइयों की गुत्थी खोलने में विभूति पटनायक अप्रतिद्वंदी हैं । 'वधु निरुपमा' में नारी के गृहस्थी में उलझे कदमों का मार्मिक चित्र देते हैं । पति -पत्नी की रोजमर्रा की जिन्दगी का उतार-चढ़ाव लिए है । निरुपमा गतिशील पात्र है, वह रुढ़िवादी सास का हिम्मत के साथ सामना करती है । अन्त में उसके व्यवहार की जीत होती है । यह उपन्यास काफी सफल रहा और निरुपमा का चरित्र ओड़िया साहित्य में नारी की नई उभरती छवि को निखार सका है । विभूतिबाबू ने अपने अन्य कई उपन्यासों में नारी की नई सोच को विषय बनाया है । इन में नये-पुराने का संघर्ष बार-बार चित्रित हुआ है । नारी का प्रेममय रूप, परिवार के प्रति सजग होते हुए भी नारी स्वाभिमान और आत्म प्रतिष्ठा की कहीं बलि नहीं होती ।

विजयिनी दास की 'देवदासी' में देव-समर्पित नारी के मूल्य स्खलन के विरुद्ध संघर्ष की कथा है । उसमें जगन्नाथ मंदिर में एकदा प्रचलित देवदासी प्रथा को लेकर पर्दे के पीछे, अंधकार गृह में चल रहे कार्य-कलापों का वर्णन आनुषंगिक है । मूलत: स्वतंत्रता संग्राम में नारी की उपेक्षित भूमिका पर प्रकाश है । इतिहास के इस अन्याय पर विजयिनी ने परोक्ष क्षोभ व्यक्त किया है । एकदा देवदासी रह चुकी माँ के देहावसान के बाद उसकी पालिता पुत्री उस परंपरा से हट कर सामान्य नारी की तरह घर-बार बसा लेती है । परंतु माँ की मृत्यु पर घड़ियाली आँसू बहाती सरकारी स्वीकृति का बहिष्कार कर देती है । माँ के जीवन संघर्ष ने उसे बहुत कुछ सीख दी है । अत: जीवन के सहज, स्वाभाविक मार्ग को ही अपना रही है, वह परंपरा से हट रही है, 'देवदासी' में और उसके नाम पर उस दिखावटी सम्मान में कोई रुचि नहीं रही ।

पर विडंबना में प्रीतिसुधा का उपन्यास ''अग्निस्नान' डालता है । अपने को पति से किसी बात (पढ़ाई,बुद्धि, चरित्र ...) में कम नहीं मानती । संयुक्त परिवार की मर्यादा भी मानती है । पर पति से वह उचित मर्यादापूर्ण व्यवहार नहीं पाती, वह इंट्रोवर्ट हो जाती है । यह मौन प्रतिवाद ही उसकी बड़ी शक्ति है । विस्फोटक विद्रोह से अधिक शक्ति है इस मौन में । अंदर ही अंदर बीमार तो हो जाती है, पर टूटती नहीं । पति अपने व्यवहार को जीवन भर बिसूरता है । नारी का यह साल की तरह सीधा और ठोस चरित्र उसे काफी मर्यादावान बना देता है । 'अग्निस्नान' की नायिका के सामने पति हर प्रकार से बौना लग रहा

है । वह अहं में डूब कर सब खो देता है और नायिका बीमारी के अलावा सब सुरक्षित रख पाती है । प्रीतिसुधा ने अंतर्मन (उभय पुरुष एवं नारी) पर जो प्रकाश डाला है, वह स्थिति को स्पष्ट करता है । नारी मनुष्य है । वह परिवार को तो सह लेती है पर पति के आगे एक इंच भी नहीं झुकती । उसके सारे छद्म और अहं को सन(जूट) की छड़ी की तरह टूक - टूक कर देती है ।

ऐसी ही मानवती नारी सुलोचना दास के 'नीलस्वर्ग' में मिलती है । यहाँ भी उपासना खूब पढ़ी-लिखी है, युवा अध्यापक से प्रेम और फिर विवाह । घर में बंधी है । सोलह साल के बाद संतान संभावना होती है, तभी पेंटिंग की ओर मन गया । पर पति को उसमें कोई रुचि नहीं । उसका मोह भंग होता है । एक कलाकार (चिन्मय) उसके चित्र (लिबरेशन और होप) देख कर फोन पर बधाई देता है । पति का कला के प्रति ठंडापन और चिन्मय का प्रोत्साहन - जीवन को सूक्ष्म अर्थ प्रदान करता है । पर पति को वही पारंपरिक संदेह हो रहा है, जब कि चिन्मय से कभी भेंट नहीं । वह कहती है -''क्या ईश्वर एक विश्वास नहीं ? चेतना नहीं ? आंतरिक अनुभव नहीं ? उस विश्वास से प्यार बिना आदमी जीये कैसे ?) पति के दुर्व्यवहार पर वह घर छोड़ती है (यद्यपि उसे मातृत्व का द्वंद बहुत टोकता है) क्योंकि यह नारी का घोर अपमान असहनीय है । बाध्य होकर अपना चित्र बेचती है, अपने पांव पर खड़ी है । वर्किंग वीमेंस हास्टल में अपने को पुन: आविष्कार करती है । जीवन का अर्थ केवल पेट भरना, परिवार सम्भालना और बच्चे जनना ही नहीं होता । सूक्ष्म चेतना के स्तर पर जीना भी उसका एक अभिन्न अंग है । यहाँ उपासना कोई समझौता नहीं कर पाती । चिन्मय के अनुरोध पर कलाकृति को कंपीटीशन में भेजती है । उसे उस स्तर पर बड़ी स्वीकृति मिलती है । परंतु आत्मसंघर्ष में यहाँ भी उसका समझौताहीन व्यक्तित्व अक्षुण्ण रहता है, देह जरूर टूटती है । उपासना की कला साधना में सार्थकता है, पति उसकी उपलब्धियों पर अपने को सफल मान कर भी व्यर्थता के हा-हुताश में घिरा छटपटा रहा है ? 'नीलस्वर्ग' उपसना का काम्य है, उसे मिलता है । पुरस्कार, प्रशंसा, प्रियपात्र, परिवार सब पीछे छूट जाते हैं । नारी की पहचान अपनी कला, अपने संघर्ष और अपने स्वयं के बल-बूते पर हो जाती है । उसका व्यक्तित्व इस्पाती है जो अटूट सिद्ध होता है, हाड़ह्रमांस की काया उसके आगे कहीं नहीं टिक पाती । यह ओड़िया नारी के पढ़-लिख आधुनिक हो रहे जीवन के आगे स्तर का रूप जहाँ अंतर्बाह्य उभय में सशक्त हो रहा है ! चमक रहा है !

फकीर मोहन से ही ओड़िया कथा साहित्य में नारी के कदम मुक्ति की ओर बढ़ रहे हैं । बीच में वह आत्म संघर्ष में उलझ गई थी । परंपरा के अनेक शेड हैं जो उससे छूट नहीं रहे । वहाँ आत्मा की आवाज पर मुखर न हो कर वह मौन विद्रोह को श्रेयकर मानती है । ओड़िशा की धरती पर संयुक्त परिवार की नींव अभी भी मजबूत है । जमींदारी और उससे उपजी मध्यवित्तीय मानसिकता में इन बातों को वह झटक नहीं पायी । यहाँ पर गरजने के लिए सागर ही बहुत है । बाकी तो सब अरण्य की तरह

चारों ओर गंभीर, घना, शांत परिवेश है । नारी जीवन इसीमें बहुत उच्चांग स्वर में उठ पाया । कवि राजेन्द्र प्रसाद पंडा के शब्दों में विद्रोह भी मीठा है, आग भी शीतल है । भीतर ही भीतर सुलग कर उसे राह छोड़ने को बाध्य कर देती है । अब इधर दो दशक में वह 'स्पर्श' के औद्योगीकरण, शहरी करण एवं कंज्यूमरिज्म जैसे शापों से यह धरती ग्रस्त जरूर हुई है, त्रस्त नहीं । तभी नारी मन में तीव्र, उत्तेजक, उद्दाम विद्रोह के स्वर नहीं बिफरे । ओड़िया उपन्यासों में वे प्रगति की, मुक्ति की समता-समानता की सारी अनुगूंजें हैं । भारतीय कथा साहित्य में नारी की गति-प्रगति का बिगुल सर्व प्रथम फकीरमोहन ने बजाया था, परंतु वह विद्रोह स्वर आज भी नरम भाव से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है । इसके स्पष्ट निदर्शन इक्कीसवीं सदी में होने लगे हैं । यह एक आत्म संतोष की बात है । शिक्षा नारी को सुलभ हो रही, टेबू टूट रहे और इस प्रकार अंधेरा छंट रहा । समूचा ओड़िया साहित्य बड़े आदर से परिवर्तन को स्वीकार दे रहा है । सामाजिक परिवर्तन ने - इसे क्रांति न भी कहें तो करवट ले ली है !

1.6 हिंदी काव्य साहित्य में महिला लेखिकाओं का योगदान :

प्रचानी भारतीय समाज नारी को बहुत ही सम्मान देता था । उस समय नारी की तुलना देवताओं से की जाती थी । जैसे विद्या, बुद्धि, विभूति और शक्ति के रूप में क्रमश: , सरस्वती, लक्ष्मी एवं पार्वती या दुर्गा का पूजन होता था । यथा 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' कहकर उसकी भूयसी प्रशंसा की जाती थी । वैदिक काल में नारियों को मंत्रों की रचना करने, सभा, समिति और युद्ध में भाग लेने राजकीय कार्यों में शामिल होने, गृहजीवन में निर्णय लेने का भी अधिकार था । घोषा, अपाला, गार्गी, मैत्रेयी, सरमा आदि सब जाने माने नाम हैं । 'असतो मा सद्गमय/ तमसो मा ज्योतिर्गमय/ मृत्योर्मा/ अमृतंगमय ।' ब्रह्मवादिनी मैत्रेयी का यह स्वर आज भी हमारी भाषा और भाव का एक अविभाज्य अंग है । परंतु आगे चलकर मध्यकाल में सतीदाह प्रथा, बालविवाह एवं विधवाओं को हेय दृष्टि से देखना जैसी कुरीतियाँ पनपने लगी । मध्यकालीन कवि कबीर दास के दोहे से नारी की अवहेलना का स्पष्ट चित्र मिलता है ।

''नारी तो हम भी करी जान नहीं विचार,
जब जाना तब परिहरी नारी बड़ा विकार ।
नारी की छाईं परत ही अंधा होत भुजंग
कबिरा तिन की कौन गति, नित नारी को संग ।

आधुनिककाल में तो इन कुरीतियों की हत्या कर दी गई । परंतु दहेज प्रथा, अपहरण, बलात्कार आदि कुरीतियाँ तमाम हद को पार कर गई । जिस दु:खदायी दशा को देखकर कवि रो उठता है और गुप्तजी के शब्दों में -

''अबला जीवन हाय ! तुम्हारी यही कहानी
आंचल में है दूध और आँखों में पानी''

साहित्य समाज का दर्पण है । समाज की बुराइयों का पर्दाफाश करने तथा उसे सुधारने में साहित्य का बड़ा योगदान रहता है । नारी की इस उपेक्षित अवस्था ने हजारों महिला साहित्यकारों को जन्म दिया है । प्रायत: संस्कृत से लेकर आज तक लगभग सभी भाषाओं में इन लोगों ने अपनी लेखनी चलाई और पुरुष साहित्यकारों की तरह प्रशंसा और सम्मान भी हासिल किया ।

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है । इस भाषा के प्रचार-प्रसार से लेकर उसे परिपुष्ट करने में महिला साहित्यकारों का अनन्य योगदान है । साहित्य के विभिन्न पक्ष जैसे काव्य, निबंध, नाटक, कहानी, आलोचना, एकांकी में इन्होंने अपनी योग्यता को दर्शाया । हिन्दी साहित्य के पन्ने पलटने से हजारों महिला साहित्यकार हमारे सामने आयेंगे जो कि पुरुष साहित्यकारों के समकक्ष कंधे से कंधा मिलाकर अपने लक्ष्य में अडिग हैं और रहेंगी । जिसके फल स्वरूप अनेक सम्मान से ये लोग सम्मानित हुई हैं । महिलाओं को प्रेरणा देते हुए पंत ने सही कहा है -

''मुक्त करो नारी को मानव,
चिर बंदिनी नारी को
युग-युग की निर्मम कारा से,
जननी, सखी प्यारी को ।''

समाज को सुधारते हुए नारी को आगे बढ़ाने और उसे दृढ़ बनाने के लिए प्रसाद भी लिखते हैं -

'नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास-रजत-नग-पग-तल में ।
पीयूष स्रोत- सी बहा करो
जीवन के सुन्दर समतल में ।''

हिन्दी साहित्य के गहन अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि एक हजार साल के इतिहास में महिला साहित्यकारों की रचना प्रायत: मध्ययुग यानी भक्तिकाल से ही शुरू होती है । आदिकाल में मुसलमानी शासकों ने नारी को स्वछंद रूप से प्रकट नहीं होने दिया । भक्तिकाल में शोषित हिन्दी समाज में भक्ति का प्लावन फैलाते हुए मीराबाई ने भारतीय समाज को कृष्ण भक्ति से विमुग्ध कर दिया । उनकी कोमल वाणी ने भारतीय साहित्य में प्रेम और आशा से भरी हुई वह पावन सरिता प्रवाहित की जिसकी वेगवती धारा आज भी भारतीय अंतरात्मा में ज्यों की त्यों अबाध गति से बह रही है । श्रीकृष्ण के साथ मीरा का प्रेम दांपत्य भाव का प्रेम था, श्रीकृष्ण उनके प्रियतम थे और वह उनकी विरहिणी प्रेयसी थी । शृंगार के दोनों

पक्षों में उनकी रचना भक्ति काल की श्रेष्ठ रचनाओं में मानी जाती है । कृष्ण का रूप वर्णन करते हुए वे कहती हैं -

''बसो मेरे नैनन में नन्दलाल
सांवरी सूरति मोहिनी मूरति नैना बने बिसाल
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित उर बैजंती माल ।''

मीराबाई को छोड़ कर भक्तिकाल में अनेक कवयित्रियों ने हिन्दी की विकास -धारा में अपना योगदान दिया है । जैसे रायप्रवीन, ताज प्रताप, कुंवरबाई, सुन्दरबाई, सुन्दर कुंवरबाई, चंद्रकला बाई, जुगुल प्रिया, जनाबाई, अक्कमहादेवी, ललद्य, गवरीबाई, गंगामती, पानबाई आदि । इनमें से अलग संत कवयित्रियों में बाबरी साहिबा, दयाबाई, सहजोबाई जैसी कवयित्रियों ने हिन्दी के विकास में अपना हाथ बंटाया ।

'बावरी रावरी का कहिये मन हयै के पतंग
भरे नित भंवरी
भंवरी जानहि संत सुजान जिन्हें हरिरूप
हिये दरसावरी''

भोगविलास में लिप्त राजाओं के स्तुति गान से भरे काव्य हिन्दी साहित्य के रीतिकाल में मिलते हैं । एक तरफ साहित्य सिद्धांत युक्त नखशिख वर्णन, दूसरी तरफ साहित्य का गहन अध्ययन इस काल खंड में किया गया । सुन्दरीकुंवरी बाई जैसी कवयित्री ने इस युग में आकर भक्ति, श्रृंगार और काव्यांगों पर अनेक रचनाएँ लिखी । सहजो बाई अपने गुरु के प्रति भक्ति प्रकट करते हुए लिखती हैं -

''चिऊंटी जहाँ न चढ़ि सकै सरसों न ठहराय
सहजो कूं वा देस मैं सतगुरु दई बसाय
सहजो गुरु रंग रेज सा सब ही कू रंग देत
जैसे-तैसे बसन हवै जो कोई आवै से न ''

रीतिकाल के कृष्णभक्त कवियों में विशेष स्थान रखनेवाली कवयित्री सुन्दरी कुंवरि बाई ने कृष्ण भक्ति परक दस काव्य की रचना की है । जिसमें 'नेहनिधि', 'वृन्दावन गोपी महात्म्य', 'संकेत युगल', 'रसपुंज', 'प्रेम संपुट', 'सार संग्रह', रंगझर', 'भावना प्रकाश' आदि प्रमुख है । इनकी कृतियों में भावों की सरस तथा कलामयी अभिव्यक्ति पायी जाती है । मृत प्राय हिन्दू जाति पर इन कवयित्रियों ने अपनी रसमयी काव्यधारा द्वारा ऐसी पीयूष वर्षा की कि वह आज तक सानन्द जीवित है ।

जैसे -

''स्याम रूप सागर में नैन बार-बार थके
नचत तरंग अंग-अंग रंगमय है
गाजन गहर धुनि बाजन मधुर बेनु
नागिन अलक जुग सोधै सगबगी है ''

हिन्दी साहित्य में भक्ति एवं रीति काल के इन साहित्यकारों की कृतियों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद इन लोगों ने अपना स्वर बुलंद रखा और पुरुषों से अपने को कमजोर नहीं होने दिया । साथ ही हिन्दी की विकास धारा को आगे बढ़ाया ।

आधुनिक काल में आते - आते खड़ी बोली का पूर्णरूपेण विकास हो जाता है तथा हिन्दी में पहली बार गद्य रचना शुरू हो जाती है । अंग्रेज शासन में रहकर भी नारी शिक्षा प्राप्त कर लेने पर ज्यादा जागरुक बन जाती है । उसकी लेखनी बहुत सशक्त, समाज सुधारक एवं प्रभावशाली बन जाती है । काव्य के साथ ही वे गद्य की सभी विधाओं में लिखना शुरू कर देती हैं । उनकी इन रचनाओं से हिन्दी साहित्य न केवल समृद्ध हुआ, बल्कि पूर्ण विकसित हुआ । इस चर्चा में हम पहले भारतेंदु युग से लेकर साठोत्तरी युग तक काव्य की और उसके उपरांत गद्य विधाओं की आलोचना करेंगे ।

छायावाद काल में अपने पैर जमाते हुए महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान जैसी कवयित्रियों ने देशभक्ति परक, रहस्यवादी, श्रृंगार के दोनों पक्षों, हास्य-व्यंग जैसे काव्यों की रचना की । छायावाद युग भारत के लिए अस्मिता की खोज का युग है । सदियों की दासता के कारण भारतीय जनता आत्मकेंद्रित होती हुई रूढ़िग्रस्त हो गयी थी । ये कवयित्री पुनर्जागरण से गंभीर रूप से प्रभावित थी । इसलिए उनका क्षेत्र एकदम पलायन, मादकता और निराशा का नहीं था । उनके सामने जीवन का, व्यक्ति, जाति और मानव मात्र के जीवन का भावात्मक पक्ष भी था और इसलिए उनके काव्य में मूल्यों की अभिव्यक्ति व्यापक मानवीय स्तर पर हुई है । उनके स्वरों में देश के पराधीन समाज का स्वर झलक उठता है और असहयोग एवं बलिदान की प्रेरणा भी । सुभद्रा चौहान के शब्दों में -

'विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र पाप से असहयोग ले ठान
गूंजा डालें स्वराज्य की तान और सब हो जावें बलिदान''

इनकी सारी कविताएँ 'त्रिधारा' और 'मुकुल' में संकलित हैं । छायावाद के चार स्तंभ माने जाने वाले कवियों में एक स्वतंत्र स्थान महादेवी वर्मा का है । उनके गीत अपनी सहज सहनशीलता, भावविदग्धता के कारण सजीव हैं । इनकी रचनाओं में 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'यामा' आदि है । जिसमें विस्मय, जिज्ञासा, व्यथा एवं आध्यात्मिकता के भाव मिलते हैं । साथ ही वे

अनुभूति और विचार के धरातल पर एकान्विति मिलती है । उन्होंने अज्ञात प्रियतम के प्रति प्रणय निवेदन किया है । जो प्राय: दु:ख प्रधान है -

'मैं नीर भरी दु:ख की बदली
स्पंदन में चिर निस्पंद बसा
क्रंदन में आहत विश्व हँसा''

लेकिन वे अपने प्रियतम से मिलना भी नहीं चाहती क्योंकि उनके विचार में मिलन ही व्यक्तित्व का विनाश करता है ।

''मिलन का मत नाम लो
मैं विरह में चिर हूँ''

हिन्दी साहित्य के उज्ज्वल नक्षत्र महादेवी वर्मा हिन्दी साहित्य में अपने काव्यों के बदौलत अमर बन गयी । काव्य के इस दौर को आगे बढ़ाने हेतु इंदु जैन की 'आँख से भी छोटी चिड़िया', 'हम से भी', पहले लोग यहाँ थे' जैसे काव्य-संग्रह तथा सुनीता जैन की 'हो जाने दो मुक्त' काव्य संग्रह ने बहुत बड़ा योगदान दिया ।

इसके उपरान्त हिन्दी साहित्य को श्रेष्ठ और समृद्ध बनाने हेतु सेवा में लगी कवयित्रियों में सुमित्रा कुमारी सिंह, विद्यापति कोकिल , विद्यावति मिश्र, तारा पांडेय, शकुंतला, राजेश्वरी देवी, रजनी पणिक्कर, कंचनलता, शचीरानी गुर्टू आदि हैं ; जिनके अवदान से आज तक यह पावन-धारा बहती आ रही है ।

1.7 हिंदी की अन्य विधाओं में नारी विमर्श :

❋ गद्य साहित्य :

गद्य साहित्य की आलोचना करते समय हम नाट्य साहित्य से प्रारंभ करते हैं । जैसे कि हम जानते हैं नाट्य साहित्य गद्य की श्रेष्ठ विधा है । अपनी प्रतिभा को प्रदर्शित करने तथा समाज की बुराइयों को जन समाज के सामने लाने का श्रेय महिला साहित्यकारों में मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, शोभना भूटानी, विमला लूथरा आदि को जाता है । मन्नू भंडारी अपने नाटक 'बिना दीवार का घर' में समाज के उन वर्गों को सामने लाती है जो कि पुरुष वर्ग की ईर्ष्या की शिकार हुई हैं । विवाहित स्त्री पुरुषों की सामाजिक समस्याओं को उभारने में ये निपुण हैं ।

शोभना भूटानी अपने नाटक 'शायद हाँ' में नया व्यंग्य और अर्थोत्पत्ति देती है । उसी तरह

मृदुला गर्ग ने भी सामाजिक संदर्भ में 'एक और अजनबी' लिखा, जिसमें जीवन की असंगतियों, तनावों, जटिल परिवेशगत स्थितियाँ, नये रूपतंत्र के कौशल से नाट्य-रचना-प्रक्रिया में अभिव्यक्ति दी । जो हिन्दी के नाट्य साहित्य के विकास की नींव है जिसमें वह आज तक टिकी है । महिला नाटककारों की लेखनी ने आज भी विराम नहीं लिया है और इस दौर में अपनी सत्ता कायम रखी हुई है ।

कम समय में ज्यादा प्रभाव डालने वाली गद्य विधा में कहानी अनन्य है । सामाजिक यथार्थ चित्रण में यह पूर्ण सक्षम होती है । महिला साहित्यकारों ने साहित्य की बागडोर संभालते हुए पूरे हिन्दी साहित्य में अपनी जगह बनायी है । इनमें बंग महिला, सुभद्रा कुमारी चौहान, शिवरानी देवी, उषा मित्रा, मंनु भंडारी, कृष्णा सोबती, शिवानी, उषा प्रियंवदा, रजनी पनिक्कर, मेहरुन्निसा परवेज, विजय चौहान आदि हैं, जो हिन्दी के पहले चरण में आती हैं । इन्होंने हिन्दी कहानी को मजबूत नींव दी उसे कलात्मक ऊंचाई भी प्रदान की है । बंग महिला की 'दुलाई वाली' से यह दौर शुरू होता है जो कि भारतेंदु युग की श्रेष्ठ कहानियों में एक थी । सामाजिक पारिवारिक जीवन के व्यावहारिक चित्रण के लिए विशेष प्रसिद्ध सुभद्रा कुमारी चौहान ने 'बिखरे मोती' और 'उन्मादिनी' नामक कहानी-संग्रहों में भारतीय नारी की परिस्थितियों, समस्याओं तथा भावनाओं का सहज चित्रण किया है । 'कौमुदि' में प्रकाशित प्रेमचंद की पत्नी की कहानियाँ हैं । जिनमें उन्होंने अपने पति की शैली को पूर्णत: अपनाया है । उषादेवी मित्रा की 'पिउ कहाँ', 'मूर्त मृदंग', 'गोधूलि', 'देवदासी', 'मन का मोह' भावुकता भरी कल्पनामयी कहानियाँ हैं ।

इसके उपरान्त मन्नू भंडारी से लेकर विजय चौहान तक कहानीकारों ने आधुनिक नारी की मन: स्थिति, पारिवारिक जीवन में पति-पत्नी के संबंध आदि विषयों को लेकर कहानी रचना की है । मन्नु भंडारी के 'कृषक', 'मैं हार गई', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', यही सच है' आदि कहानी संग्रह हैं । उषा प्रियंवदा के 'जिन्दगी और गुलाब के फूल' तथा 'एक कोई दूसरा' आदि कहानी-संग्रह हैं ।

साठोत्तरी महिला कहानीकारों में ममता कालिया, सुधा अरोड़ा, मणिका मोहिनी, सिम्मी हर्षिता, कृष्णा अग्निहोत्री, शशिप्रभा शास्त्री, मृदुला गर्ग, प्रतिभा वर्मा, सूर्यबाला, नमिता सिंह, राजी सेठ, निरुपमा सेवती, अनिता औलक, वर्तिका अग्रवाल, दीप्ति खंडेलवाल हैं जिन्होंने आधुनिकता बोध एवं स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व के चित्र आंके हैं ।

ममता कालिया ने व्यंग और करुणा के सहारे युगीन अंतर्विरोध को समर्थ और चुटीली भाषा में व्यक्त किया है जो उनके 'एक अदद औरत', 'सीट नं. 69', 'काली साड़ी' आदि कहानी संग्रह में उपलब्ध है ।

'खामोशी को पीते हुए', 'आतंक बीज', 'काले खरगोश', 'कच्चा मकान' एवं 'भीड़ में गुम' आदि कहानी संग्रह निरुमपा सेवती का हिन्दी साहित्य के प्रति अनन्य अवदान है । उनकी कहानियों में

यंत्रणा,संत्रास, एवं तनाव से मुक्त होने की इच्छा एवं अस्तित्व की तलाश का सार्थक प्रयास मिलता है ।

सामाजिक मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषण करते हुए महिला कहानीकार शशिप्रभा शास्त्री अपने कहानी-संग्रहों जैसे 'वीरान रास्ते', 'झरना', 'सीढ़ियाँ', 'परछाइयों के पीछे' और 'क्योंकि ये स्त्रियाँ' के द्वारा कहानी साहित्य को समृद्ध बनाने में सक्षम हो पाती हैं ।

इनके अलावा शिवानी के 'रति विलाप', 'लाल हवेली', 'करिए छिमा', 'स्वयं सिद्धा' । मेहरुन्निसा परवेज की 'आदम और हवा', 'गलत पुरुष', 'आकाश नील', अंतिम चढ़ाई' आदि, नमिता सिंह की 'नाले पार का आदमी' आदि कहानी संग्रह हिन्दी साहित्य को विकसित होने में महत्व रखती है ।

कहानी के उपरांत उपन्यास आधुनिक युग की अत्यंत लोकप्रिय एवं भावात्मक विधा है । आदर्शवाद के खोखलेपन को नकारते हुए यथार्थवाद को उपन्यास साहित्य ने अपनाया । उपन्यास रचना के प्रारंभिक काल में सामाजिक विसंगतियों जैसे स्त्री शिक्षा का अभाव, बाल विवाह, पुरुषों का एकछत्रवाद, नारी समाज की दयनीय अवस्था का पर्दाफाश करती हुई महिला उपन्यास लेखिका साध्वी सती, प्रियंवदा देवी, हेमन्त कुमारी चौधरी, यशोदा देवी, ब्रह्मकुमारी, भगवान कुमारी दुबे, श्रीमती रुक्मिणी देवी, लीलावती देवी आदि प्रमुख हैं ।

हिन्दी उपन्यास की प्रारंभिक अवस्था में साध्वी सती अपनी 'सुहासिनी' नामक चरित्र प्रधान सामाजिक उपन्यास लिखा । सरस्वती गुप्ता का 'राजकुमार' । प्रियंवदा के 'लक्ष्मी' तथा 'कलयुगी परिवार' का एक दृश्य जो क्रमश: स्त्री शिक्षा एवं पारिवारिक समस्याओं का विशद चित्रण है । हेमंत कुमारी चौधरी की रचनाओं में 'आदर्श माता' और 'जागरण' प्रमुख है ।

यशोदा देवी का 'वीर पत्नी' एक ऐतिहासिक उपन्यास है । ब्रह्मकुमारी भगवान दुबे का 'सौंदर्य कुमारी' एक सामाजिक उपन्यास है । इसमें स्त्री की तरह पुरुष को भी पवित्र रहने का उपदेश दिया गया है । उद्देश्य और आदर्श की दृष्टि से इसे तत्कालीन विशिष्ट रचना कह सकते हैं । रूक्मिणी देवी का 'मेम और साहब' एक हास्य-व्यंग्य प्रधान उपन्यास है । लीलावती देवी के 'सती दमयंती' तथा 'सती सावित्री' नारी समाज के समक्ष भारतीय सतियों के आदर्श चित्र प्रस्तुत करते हैं ।

आगे चलकर हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास काल में उषा देवी, कांचनबाला सब्बरवाल, लक्ष्मी देवी, पूर्णशशि देवी, प्रभावती भटनागर ने अपनी लेखनी चलाई और दहेज प्रथा, कन्या विक्रय, अनमेल विवाह, पुरुषों के दुराचार, पर्दा प्रथा, बहु विवाह आदि समकालीन सामाजिक कुरीतियों तथा निरक्षरता पर भी प्रकाश डाला है ।

उषा देवी 'वचन का मोल', 'प्रिया', 'जीवन की मुस्कान', 'पथचारी सोहिनी', 'सम्मोहिता', 'नष्टनीड़ ' जैसे उपन्यासों में भारतीय नारी की गरिमा का गान करते हुए पाश्चात्य सभ्यता का

अंधानुकरण का निर्मम खंडन किया है और उच्छृंखलता, फैशनपरस्ती, कर्त्तव्य के प्रति उदासीनता आदि आधुनिक सभ्यता के दोषों पर करारा व्यंग्य किया है ।

कंचनलता सब्बरवाल ने भी अपने भोली भूल, संकल्प, भटकती आत्मा, मूक तपस्वी त्रिवेणी, स्वतंत्रता की ओर, पुनरुद्धार, अनचाहा, नयामोड़, स्नेह के दावेदार जैसे उपन्यासों में जन सेवा की आवश्यकता एवं श्रेष्ठता पर बल दिया है । लक्ष्मी देवी का 'शिवसती', 'गिरिजा का 'कमला कुसुम', शैल कुमार देवी का 'उमा सुन्दरी', उषारानी का ' फांसी कैसे', शीलो का 'ग्रेजुएट लड़की' आदि प्रमुख उपन्यास हैं ।

स्वातंत्र्योत्तर युग में श्रीमती रजनी के उपन्यास जैसे 'ठोकर', 'पानी की दीवार', 'मोम के मोती', 'प्यासे बादल', 'जाड़े की धूप', 'काली लड़की', एक लड़की दो रूप', 'महानगर की सीता', बदलते रंग', 'सोनाल दी' आदि सामाजिक एवं नारी की विवक्षताओं को और उसके उत्तरदायी सामाजिक परिस्थितियों का सफल चित्रण किया है । श्रीमती वसंत प्रभा के 'सांझ के साथी' और 'अधूरे तस्वीर' भी उसी सीमा में आते हैं ।

कृष्णा सोबती ने 'डार से बिछुड़ी', 'ग्यारह सपनों का देश', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'यारों के यार', 'तीन पहाड़' हिंदी साहित्य को समर्पित किए हैं । इस समय के अन्य महिला उपन्यासकारों में लीला अवस्थी, चंद्र किरण, कुमारी अन्नपूर्णा तोगड़ी, श्रीमती विमल वैद आदि चर्चित हैं ।

अद्यतन महिला उपन्यासकारों में ममता कालिया, मन्नु भंडारी, शिवानी, उषा प्रियंवदा, कुमारी कमलेश, निर्मला वाजपेयी तथा ऐसे कुछ उपन्यासकार हिन्दी उपन्यास साहित्य को मजबूत एवं समृद्ध करते हैं ।

ममता कालिया के 'छुटकारा' कथा 'बेघर', मन्नु भंडारी के 'आपका बंटी' और 'एक इंच मुस्कान' , शिबानी के 'मायापुरी', 'भैरवी', 'कृष्णाकली', 'श्मशानचंपा', 'चौदह फेरे', उषा पियंवदा के 'पचपन खंभे लाल दीवार', कुमारी कमलेश के 'शाप और वरदान', निर्मला वाजपेयी के 'सूखा सैलाब जैसे उपन्यासों ने हिन्दी साहित्य के विकास में प्रमुख योगदान दिया है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास रचना के क्षेत्र में लेखिका और लेखकों में विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती ।

देश की राजनीति, समाज सुधार, धर्म, आध्यात्मिक, आर्थिक दुर्दशा, महा पुरुषों की जीवनी जैसे विषय साहित्य के निबंध विधा के पहले चरण में आये । आगे चलकर समाज की हीनावस्था, आर्थिक विषमता, धार्मिक पतन और व्यापक राष्ट्रीय समस्याओं को भी निबंधकारों ने अपना विषय चुना, जिसमें ताजगी महसूस होती रही । समाज के साथ ताल में ताल मिलाकर मनोविकार साहित्य सिद्धांत , साहित्यालोचन संबंधी निबंध लिखे । इस कार्य में विशेष योगदान देने में महिला निबंधकार पीछे नहीं हटी । इसमें सबसे पहले महादेवी वर्मा का नाम आता है । उनके 'शृंखला की कड़ियाँ',

'अतीत के चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाएँ' में उन्होंने भावनात्मक शैली में अति निपुण ढंग से अपने विचारों को व्यक्त किया है । जिसमें समकालीन सामाजिक समस्याएँ स्पष्ट दिखाई देता है । शृंखला की कड़ियाँ में भारतीय नारी की करुण दशा और दूसरी ओर उसकी प्रच्छन्न शक्ति गरिमा का उच्छ्वास पूर्ण चित्रण है । जीवन के शाश्वत मूल्यों से पोषित उनके साहित्य कला संबंधी 'साहित्यकार की आस्था' के नाम से प्रकाशित है । महादेवी की तरह अनेक महिला निबंधकार आज तक इस काम को करती आ रही हैं ।

❋ आलोचना साहित्य :

आलोचना साहित्य सभी गद्य विधाओं में अपना विशेष स्थान रखता है । इसकी विषयवस्तु अन्य साहित्य विधा ही है । आलोचना साहित्य में भी महिला आलोचकों का स्थान विशेष है । इस क्षेत्र में महादेवी वर्मा का नाम पहले आता है । उन्होंने अपनी प्रकाशित पुस्तकों की भूमिका में जो आलोचनात्मक लेख लिखे हैं वे किसी अन्य आलोचक के लेख से कम नहीं है । उसमें साहित्यिक विधा की समीक्षा के साथ-साथ शैली की निपुणता के कारण पाठक के हृदय को स्पर्श कर जाते हैं । आगे चलकर डॉ. निर्मला जैन ने इस कार्य को संभाला । उनकी 'रस सिद्धांत और सौंदर्य शास्त्र' एक सिद्धांतपरक आलोचना है । साठोत्तरी युग में जन्मी अनेक महिला आलोचक इस कार्य में कर्मरत हैं ।

❋ रेखाचित्र :

महिला साहित्यकारों ने रेखाचित्र के विकास में प्रसिद्धि देने में प्रमुख भूमिका निभायी है । जिसमें महादेवी वर्मा, कुंतल गोयल, पद्मिनी मेनन, कृष्णा सोबती, कुरंगी बहन देसाई आदि प्रमुख हैं ।

हिन्दी साहित्य के संस्मरणात्मक रेखाचित्र साहित्य की श्रीवृद्धि में महादेवी वर्मा ने अत्यधिक योगदान दिया है । 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पथ के साथी', 'स्मारिका और मेरा परिवार' उनके उल्लेखनीय रेखाचित्र संग्रह हैं । अपने संपर्क में आए शोषित व्यक्तियों, दीन-हीन नारियों, साहित्यकारों, जीवजंतुओं आदि का संवेदनात्मक चित्रण उन्होंने बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है । उनके रेखाचित्रों में चित्रमयता का अनायास समाविष्ट हो गया है ।

आगे चलकर कुंतल गोयल के 'कुछ रेखाएँ कुछ चित्र', पद्मिनी मेनन के 'चांद', कृष्णा सोबती के 'हम हसमत' आदि रेखाचित्रों को भी बहुत प्रसिद्धि मिली है । अनूदित रेखाचित्रों में कुरंगी बहन देसाई को 'बा मेरी माँ', 'मनु बहन' आदि गांधीजी कृत गुजराती रचना का हिन्दी अनुवाद है, जो हिन्दी के श्रेष्ठ रेखाचित्रों में भी गिने जाते हैं ।

जीवनी में महिला साहित्यकारों में यशोदादेवी, मनोरमा बाई, मिलखा सिंह आदि हैं । यशोदा देवी ने 'आदर्श महिलाएँ', मनोरमा बाई ने 'विद्योत्तमा' लिखी । बाकी साहित्यकार ने विदेशी लेखकों की जीवनी का अनुवाद कर प्रसिद्धि लाभ की, जिसमें महिला लेखकों ने अपना स्थान कायम रखा ।

अबला दुर्बला कही जाने वाली भारतीय महिला ने सामाजिक आर्थिक दृष्टि से उपेक्षित होकर भी कभी हार नहीं मानी । स्वतंत्रता से पहले संग्राम में हो या राजनीति, कभी भी वह पुरुषों के पीछे नहीं रही । कदम से कदम मिलाकर कंधे से कंधा मिलाकर चली हैं ।

1.8 अभ्यास प्रश्न :

i) निम्न के उत्तर दीजिए :

क) 'नारी विमर्श' की परिभाषा दीजिए ।

ख) पश्चिम में नारी संबंधी परिचर्चा का प्राचीन रूप स्पष्ट कीजिए ।

ग) 'नारी' पर प्राचीन भारतीय दृष्टि की समीक्षा कीजिए ।

घ) आधुनिक पश्चिमी नारी विमर्श पर प्रकाश डालिए ।

ङ) भारत में स्वतंत्रता के बाद हुए स्त्रीवादी आंदोलन पर संक्षेप में प्रकाश डालिए ।

च) हिंदी कथा साहित्य में प्रमुख नारी लेखिकाओं के योगदान की चर्चा कीजिए ।

छ) पश्चिम में आधुनिक नारी लेखन पर विचार कीजिए ।

ज) हिंदी के स्वातंत्र्योत्तर काव्य साहित्य में नारी लेखन पर प्रकाश डालिए ।

झ) ओड़िया साहित्य में नारी लेखन की धारा का परिचय दीजिए ।

ञ) स्वातंत्र्योत्तर भारत में हुए नारी अधिकारों संबंधी आंदोलनों का परिचय दीजिए ।

ii) संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

ट) प्लेटो की स्त्री भावना का परिचय दीजिए ।

ठ) 'पश्चिम में नारी आंदोलन समकालीन समस्याओं पर आधारित है ।''

इस कथन की समीक्षा कीजिए ।

ड) भारतीय नारी की समस्यायें परंपरा से प्राप्त है - इस कथन पर विचार कीजिए ।

ढ) लोक परंपरा में भारतीयों की नारी दृष्टि का परिचय दीजिए ।

iii) अति संक्षिप्त उत्तर दीजिए

त) पश्चिम में नारी चिंतन में पहले प्रमुख पुरुष कौन हैं ?

थ) नारी के मताधिकार, शिक्षा और रोजगार में नारी-पुरुष समानता की चर्चा करने वाले प्रमुख दार्शनिक कौन थे ।

द) क्या प्राचीन भारत में पर्दाप्रथा थी ?

ध) 'कमीशन आन स्टेट्स आफ विमन' का गठन अमेरिका में किसने किया था ?

न) ओड़िआ 'उपन्यास' 'परजा' किसने लिखा ?

प) 'बधु निरुपमा' किस भाषा का उपन्यास है ?

फ) 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' - पंक्ति किसने लिखी ।

ब) 'शृंखला की कड़िया' की लेखिका कौन हैं ?

भ) 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी' के कवि कौन हैं ?

म) "The second sex" के रचनाकार कौन हैं ?

1.9 संदर्भ ग्रंथ -

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - सं. डॉ. नगेंद्र (मयूर पेपरबैक)
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (कमल प्रकाशन)
3. वर्तमान साहित्य, मार्च - 2011
4. समकालीन भारतीय साहित्य -मई - जून 2012 (साहित्य एकादमी)
5. समकालीन भारतीय साहित्य- मार्च-अप्रेल 2008 (साहित्य एकादमी)
6. समकालीन भारतीय साहित्य-जुलाई-अगस्त 2009 (साहित्य एकादमी)

युनिट - II

हिंदी उपन्यास में नारी विमर्श :

2.1 पचपन खंभे लाल दीवारें

2.1.1 लेखिका का परिचय (उषा प्रियंबदा)

2.1.2 कथानक

2.1.3 मुख्य पात्र

2.1.4 भाषा एवं वातावरण

2.1.5 नामकरण -शीर्षक

2.1.6 'पचपन खंभे लाल दीवारें ' में नारी विमर्श

2.1.7 अभ्यास प्रश्न

2.1.8 सहायक ग्रंथ

2.2 ठीकरे की मंगनी

2.2.1 लेखिका का परिचय (नासिरा शर्मा)

2.2.2 कथानक

2.2.3 विश्लेषण

2.2.4 चरित्र चित्रण

2.2.5 भाषा एवं वातावरण

2.2.6 नामकरण

2.2.7 अभ्यास प्रश्न

2.2.8 सहायक ग्रंथ

युनिट - II

हिंदी उपन्यास में नारी विमर्श

पचपन खंभे लाल दीवारें

2.1.1 लेखिका का परिचय (उषा प्रियंबदा):

उषाजी का जन्म इलाहाबाद में हुआ । वहीं पढ़ाई लिखाई कर अंग्रेजी में डाक्टरेट की । ब्यूमिंगटन की इंडियाना युनिवर्सिटी में दो साल रह कर तुलनात्मक साहित्य पर शोध किया । उसके बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कालेज में और फिर इलाहाबाद विश्वविद्यालय, मेडिसन के दायित्व एशियाई विभाग में प्रोफेसर बनी । I977 में प्रोफेसर आफ इंडियन लिटरेचर बनी । वहीं से 2002 में अवकाश ले कर लेखन में जुट गई

उषा का पहला कथा संग्रह I961 में आया और I962 में 'पचपन खंभे लाल दीवारें' । बाद में I966 में 'रुकोगी नहीं राधिका' प्रकाशित हुआ ।

उषा के लेखन के दौरान सूर के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हैं । मध्यकाल और लोककथा पर अनेक लेख छपे हैं ।

2.1.2 कथानक :

यह उपन्यास एक कालेज अध्यापिका के जीवन का अंश लेकर लिखा गया है । इसमें मुख्य पात्र सुषमा है । वह मध्यम वर्ग की महिला है । तीस साल से अधिक उम्र की है । अब तक विवाह नहीं किया । दिल्ली के एक प्राइवेट कालेज में इतिहास पढ़ाती है ।

कालेज में लड़कियों का हास्टल है, उसकी वार्डन पद पर नियुक्ति होती है । आधुनिक ढंग से सजा कक्ष है । हास्टल की नई बिल्डिंग कालेज से दिखती है । कालेज में नौकरी करनेवाली कहिलाओं में :

एक मिस मीनाक्षी संस्कृत की अध्यापिका है ।

दूसरी अध्यापिका मिस शास्त्री है ।

तीसरी अध्यापिका रोमां डेविड हैं ।

सुषमा की मौसी कृष्णाजी हैं जो कानपुर में रहती हैं । सुषमा से स्नेह करती है । सुषमा की छोटी बहन नीरू शादी लायक हो गई है ।

जब कोई उसे कहता है कि अपना भी खयाल कर और अपना भविष्य देख, तो सुषमा उसकी सलाह की उपेक्षा कर देती ।

लेकिन मां ने समय पर उस के विवाह की ओर ध्यान नहीं दिया, अत: कुंवारी रह गई । इसका सुषमा को गहरा मलाल था ।

मौसी साड़ी ले गई थी । कुछ दिन बाद कढ़ाई करा कर नील के हाथ भेज दी । इस प्रकार नील कश्यप के साथ सुषमा की पहली भेंट हुई । फिर दो दिन बाद कौशल्या आई नील के साथ । पता चला कि नील फिलिप्स कंपनी में ऊँचे पद पर काम करता है ।

सुषमा की एक दिन बाजार में नील से भेंट होती है, रेस्तोरां में दोनों चाय पीते हैं । फिर वह काटेज तक छोड़ने आता है । दोनों में कुछ निकटता बढ़ती है । वह सोचने लगती है -नील उम्र में छोटा है । वह भी छोटी लगती है । उसे न प्रेमी चाहिए, न पति । लेकिन जीवन का बोझ - इस में एक साझीदार चाहिए ।

कालेज में अध्यापिका स्वाति के पेट से होने की बात पर सुषमा मिसेज पुरी से उलझ जाती है ।

उसका कहना है कि स्वाति जब संकट में है तो उसकी मदद करनी चाहिए । ऐसे समय में व्यंग कर उसे अकेली छोड़ना अमानुषिकता है ।

तभी मिस शास्त्री ने बताया कि कपड़े बदलते समय लड़कियां ऊपर से उन्हें देख रही थी । इस पर उसने नाम पूछे ताकि कार्यवाही की जा सके । बात आयी गई कर दी ।

तब मिस शास्त्री ने पूछा - उस दिन छोड़ने रात में कौन आया था ?

सुषमा ने फिर बात को टाल दिया । सच सामने नहीं आ पाया ।

वह नील का परिचय खुल कर नहीं दे सकी ।

मिस शास्त्री ने बताया कि लड़कियाँ लिहाज छोड़ आजकल ताक-झांक करती हैं ।

दशहरे की छुट्टियों के ठीक पूर्व नील आता है तो दोनों में कुछ और नजदकी हो जाती है । बातों के बहाने सुषमा अपना परिचय देती है । उम्र तैंतीस वर्ष, गरीब घर, हिंदी टीचर । इसके बाद नील चला जाता है । सुषमा गांव आ जाती है । सबको अपनी लायी गिफ्ट देती है । कुछ दिन बाद दिल्ली लौटती है - नील आता है लेने । साथ टैक्सी में लौटते हैं । खाना खाता है ।

ऐसे ही फिर रेस्तोरां जाते हैं । वहाँ माँ की चिट्ठी पढ़ वह असहज हो जाती है । नील सहारा देता है ।

लेकिन इस बीच कालेज में उसके नील के संपर्कों पर चर्चा होने लगी । मिस शास्त्री उस पर नजर रखे थी । मीनाक्षी बताती है - गर्ल हास्टल, स्टाफ रूम, नौकरों, हर जगह उसीकी चर्चा होने लगी ।

नील से मिलने के बाद इधर सुषमा कुछ उल्लसित थी । उसके जीवन में यह आया परिवर्तन सब देख कर अचंभा करते । सुषमा को लगा - वह कोई शापग्रस्त राजकुमारी है जो नील के स्पर्श से जाग उठी है ।

सुषमा फिर सहेलियों के बीच नील को देखती है जो आफिस के लोगों के संग आया है । वह कार में लेकर छोड़ने आता है । आँसू भरे स्वर में कहती है - तुम मुझ से न मिला करो । नील इससे चौंक जाता है । जानना चाहता है तो वह बताती है -

स्वभिमानी हूँ । शरीर का सौदा कभी नहीं कर पायी । अच्छी नौकरी छोड़ दी । पिता अशक्त हैं । माँ दूसरी पत्नी । फिर यह कालेज । नौ साल से यहीं हूँ । अपने परिवार के लिए खुद को बंद कर लिया है प्राचीरों में । अपने लिए कुछ भी नहीं रखा । नील हटने के बाद फिर उस में बंद हो जायेगी ।

लौटी तो देखा मीनाक्षी प्रतीक्षा कर रही है । वह अपना सामन लेने बैठी है ।

वह उसका सामान कार में भूल गई थी । अगले दिन नील का नौकर आकर दे गया ।

मिस शास्त्री से लड़कियों ने चुहल की । हास्टल न सम्हाल पाने का आक्षेप मिला । मीरा धीर आकर बातों में वही प्रश्न करती है - विवाह क्यों नहीं कर लेती ? वह भी परिवार की समस्या से परिचित है । वह नील के साथ नीरू के विवाह की बात छेड़ती है । लेकिन वह घरवालों के हाथ में है । अत: बात वहीं रह जाती है ।

कई हफ्तों बाद जब वह अचानक मीनाक्षी के साथ बाहर गई थी, तब नील बिना मिले लौटता है । शाम को कुछ लफाफे लिए फिर आ पहुँचा । नील ने कहा - तुमने मना किया, तो नहीं आया । सुषमा खीझ उठती है । कान के रिंग लाया है जो बहुत पसंद करती है ।

अचानक माँ और विनय सुषमा के पास पहुँच जाते हैं ।

कुछ समय बाद वहाँ नील आ जाता है । चाहता था सिनेमा ले जाने । पर टाल जाता है । माँ नील का परिचय परिचय जानने को उत्सुक हो जाती है । रात में माँ समस्या पर चर्चा करती है । सुषमा झुंझला उठती है । सुबह माँ नीरू को वह साड़ी दे देती है जो नील लाया था । इस पर सुषमा झुंझला जाती है ।

इधर मिसेज रायचौधरी और मिस शास्त्री मिलकर सुषमा के विरुद्ध षडयंत्र रचती हैं । नील के संपर्क को उछाल कर सुषमा को बदनाम करा दें । हास्टल वार्डन पद से हट जायेगी । वहाँ मिस शास्त्री आ जायेगी ।

सुषमा को इन बातों का पता नहीं चला । तभी नील आ जाता है । बैठ कर काफी पी जाती है । तभी उन दोनों को एक कमरे में देख कालेज की साथिन पिछवाड़े से आ पहुँचती हैं । हँसी -मजाक -व्यंग करती हैं । नील कॉफी पी कर वहाँ से निकल जाता है । पर उनको कॉफी बना कर पिलाई गई वे कमरा भी देखती हैं । इस से भविष्य के तूफान की संभावना सुषमा अच्छी तरह समझ लेती है ।

जब लाइब्रेरी जाती है तो लड़कियां उसकी चर्चा करती हैं । - यह सिनेमा जाती है नील के साथ वे उझक कर कमरा भी देख चुकी हैं ।

वह नील को बुला कर सब बता देती है । वह सहारा देना चाहता है । वह झकझोर कर पूछ लेता है - इतनी मौन क्यों हो ? मेरी तरफ इतनी ठंडी हो । तुम्हारे भाई बहन परिवार इनमें सिमटी हो ! नौकरी इतनी मजबूरी है । नील को क्रोध आ जाता है - ''क्या तुम्हें किसी और की प्रतीक्षा है ? कोई ऐसा है जो कि तुम्हारी नजरों में तुम्हारा पूरा मोल चुका सके । तुम ने अपने ऊपर जो प्राइस चिट चिपका रखी है उतना सब देने को मेरे पास नहीं है ....''

मगर सुषमा इतना भर कहती है -''तुम कैसी बातें कर रहे हो, नील !''

नील उसी रो में कह देता है -''ठीक है तुम वहीं रहो । इन पचपन खंभों में बंदी हो कर । मैं तुम्हारे बहकावे में आ गया था । मैं सोचने लगा था कि तुम्हारे लिए मैं ही सब कुछ बन गया हूँ । अब मैंने जाना कि तुम्हारे पास खूब सूरत चेहरे के अलावा एक बहुत व्यावहारिक बुद्धि और अपना भला समझनेवाला दिमाग भी है ।

अब वह आर्द्र स्वर में रोकती है -''प्लीज !'' सामने फैली बांह हटा कर दनदनाता चला जाता है वहाँ से ।

एक अजीब दुविधा देखती है । कांपने लगती है । उद्विग्नता भर जाती है ।

उसके अंदर का द्वंद स्पष्ट देख लेती है मीनाक्षी । लेकिन कुछ क्षण बाद धक से सब बदल जाता है । वह अचानक शांत हो जाती है । सारी आकुलता अगाध निस्तब्धता में बदल जाती है । मानो भयंकर शब्द करती आंधी कहीं दूर से ही गुजर गई है ।

पर बात रुक जाती है । कमरे में लेटी तो मीनाक्षी आ जाती है । उसकी मार्च में शादी तै हो चुकी है । यह जब नील की बात उठाती है तो इसे असंभव बता देती है । हालांकि नील के जीवन में अनेक बाद बदलाव आ गया । हँसी-खुशी, झरने -सा उल्लास सब । पर नील से कुछ नहीं चाहती ।

तभी प्रिंसिपल ने बुला कर एक दिन सारी बातें कह दी । वह कहती है कि इससे कालेज की बदनामी होती है । डिसिप्लीन खत्म होते हैं । सुषमा नौकरी छोड़ कर जो चाहे करे ।

मुझे ऐसी उम्मीद नहीं थी । आप तो कालेज में काफी अनुशासन प्रिय थी । यह बदलाव आश्चर्य में भर देता है ।

इस प्रकार धमकी भरी बातों से उसे मेसेज दे देती है कि नील का साथ कालेज में रहते सह्य नहीं होगा । वह सब छुपे भी नहीं रहा । अत: उसे दो में से एक को चुनना होगा । पर सुषमा की पारिवारिक स्थिति ऐसी कि न नील के साथ जा सकती है न नौकरी छोड़ सकती है । आखिर अपने को ही कठोर बना लेती है ।

नील यह सब सुनकर उत्तेजित हो उठता है । नौकरी छोड़ दे । वह गुस्से में भर चला जाता है । बहन नीरू की शादी जैसे भी हो संपन्न हो जाती है । पार्टी भी संपन्न हो जाती है । उसमें नील नहीं आया । सब समझ लेती हैं कि सुषमा ने उससे संबंध तोड़ लिया । कालेज में सुषमा गंभीर हो गई । क्लास में भी । एक दिन नील आया । शाम को घूमने गये । वह छोड़ने आया तो कमरे में आने नहीं दिया । अन्दर आ कमरा बंद कर लिया । नील बिना कुछ कहे लौट जाता है ।

बाद में कौशल्या आयी थी । मौसी की भेजी साड़ी देती है । तब पता चला कि नील हालैंड जा रहा है ।

उस समय दिन भी सुषमा कालेज की ड्यूटी में डूबी रही । रात के डिनर तक हर काम सुचारु ढंग से चला । जल्दी छुट्टी होने पर भी छात्रायें घर भागने को उतावली नहीं । भाषण सारे शांतिपूर्वक सुने । सेक्रेटरी ने बिना अटके धन्यवाद दिया । बाद में चाय भी ठीक से हो गई । खाना ठीक ताजा था । बैरे चुस्ती से काम करते रहे । मतलब सुषमा ने सारा काम सही ढंग से व्यवस्थित कर लिया था । छात्र, अध्यापक, प्रिंसिपल, नौकर किसी को शिकायत का कहीं मौका नहीं था ।

नौ बजे के आसपास एक बार मन किया कि जाकर एयरपोर्ट पर नील को विदाई दे आऊँ । टैक्सी मंगाने के लिए मीनाक्षी को कह देती है । प्रिंसिपल को जरूरी काम है -कह कमरे में आती है । मैकअप कर तैयार होती है ।

एक बार मन किया एयरपोर्ट जा कर बिदा कर आऊँ । पर मन कड़ा कर टैक्सी वापस कर दी ।

सिर्फ इतना कहा -''मैं नहीं जाऊँगी ।''

वह अपने में बंद होकर रह जाती है ।

2.1.3 मुख्य पात्र :

*** सुषमा –** इस उपन्यास की मुख्य पात्र सुषमा है । सारी घटनाएँ शुरू से अंत तक उसीके इर्द-गिर्द घूमती हैं । पढ़ी-लिखी, अध्यापिका, सुन्दर चेहरा और अच्छा स्वभाव ।

सुषमा के माता-पिता : पिता अपंग है, माँ आर्थिक जकड़न के कारण लाचार है । सुषमा को मां-बाप का अकुंठ प्रेम नहीं मिलता वरन अपने स्वार्थ के लिए उसके विवाह की ओर खास ध्यान नहीं दे पाते । वह कमाऊ लड़की है । घर चलाती है । अत: उसे इधर-उधर होने नहीं देते । कड़ी निगरानी रखी जाती है । इससे सुषमा कसमसा जाती है । पीछे रह जाती है ।

माँ फिर भी बेटी के लिए बिसूरती है । वह छोटी का विवाह कर देती है । इसमें सुषमा की मदद लेती है । पिता लाचार हो जाते हैं । सुषमा के नौकरी छोड़ने की बात पर एकदम चौंक जाते हैं । सुषमा को खर्च कम करने की सलाह देते हैं ।

यद्यपि माता-पिता प्रत्यक्षत: कथानक में महत्व नहीं रखते । पर माता-पिता का चेहरा तो बीच-बीच में झांकता है । इसीमें कथानक एकदम उलट जाता है ।

दोनों पारिवारिक मूल्यबोध में बंदी हैं । परंतु आर्थिक तंगी के कारण समझौता कर लेते हैं, बेटी की कमाई पर चलते हैं । यद्यपि सुषमा को नियमित करते हैं । औपचारिक रिश्तेदार नहीं ले लेते । उषाजी ने आर्थिक दबाव के चलते लाचारी भोगते मां-बाप का अत्यंत करुण चित्र खींचा है । उधर घर में बेटे की जगह कमाऊ बेटी है । उनकी अवस्था और भी दयनीय हो उठी है । दहेज के बोझ को उठा न पाने के कारण अविवाहित बेटी रखने की दुरावस्था भी कष्ट देती है ।

पारिवारिक स्थिति में पढ़ कर विवाह नहीं कर पाती । अत: मानसिक तौर पर अस्तव्यस्त हो जाती है । एक सहारा मिला तो सुषमा उस ओर ढलती है । लेकिन समाज उसे अस्वीकार करता है । अत: सुषमा विचलित हो जाती है । मानव के सहज स्वभाव में वह नील से संबंध बढ़ाती है । पर अपने परिवार और लोगों के छोटेपन के कारण आहत हो पीछे हटती है । नील को जीवन से विदा कर देती है । मानो कोई बेवकूफी कर रही थी । अब उससे छुटकारा पा जाती है ।

इस सारी आंधी में सुषमा मानसिक झंझा से गुजरती है । समाज उसे क्षमा नहीं करता । हास्टल की लड़कियां, उसकी सहकर्मी सब व्यंग करती हैं । छटपटा कर वह नील से संबंध तोड़ बाहर आ जाती है । जीवन में बड़ी चोट खा बैठती है । सुषमा संवेदनशील है । माँ -बापू , मौसी सबके प्रति करुणा है । यहाँ तक कि नील से भी वह संयत व्यवहार करती है । कितना ही मन विकल हो, नियंत्रण करती है । नील के निकट तक नहीं जा पाती ।

बार-बार मन विचलित होता है । पर जी कड़ा कर रह जाती है । हलके फुलके रोमांस रंग में

कभी नहीं रुकती । वह अपने अपंग पिता और बेसहारा मां के प्रति क्रूर नहीं हो पाती । सारे भाई-बहनों के प्रति जो स्नेह एवं करुणा है, उसके चरित्र का सबसे बड़ा गुण है ।

स्वाभिमान के लिए कुछ कर काम कर देती है । किसी के आगे सिर झुका ना नहीं सीखा । वैसे किसी का दिल दु:खाना नहीं सीखा । परंतु अपने चरित्र में स्टील की तरह दृढ़ है । कभी नहीं मुड़ती । बड़े सेठ के यहाँ नौकरी की तो सेठ ने खरीदना चाहा पर इस्तीफा देकर आ गई । वैसा ही छोटी बहन को चाहती है ।

सुषमा पर इतने लांछन आरोप लगते हैं, पथभ्रष्ट नहीं होती । नील को भी जल्दी से आगे बढ़ने नहीं देती ।

सांसारिक रूप में अपना कमरा करीने से सजाती है । अपना मेकअप करने में भी कभी पीछे नहीं रहती । अर्थात् इस दृष्टि से आधुनिक युवती के रूप में आकर्षक है ।

इस उपन्यास में शुरू से अंत तक सुषमा की मानसिक कसमकश का ज्यादा विश्लेषण हुआ है । हमेशा वह द्वंद से घिरी रहती है । नील से मिलने के बाद तो द्वंद और भी यह गहरा जाता है । आज की सामाजिक स्थिति में सुषमा का संकट यथार्थ का प्रतीक है । नारी जीवन किसी क्षण इकहरा नहीं रह पाता । उसे हरदम द्वंद का सामना करना पड़ता है । कभी -कभी उस पर तनाव बढ़ जाता है तो वह संतुलन खो बैठती है । परंतु फिर कुछ समय के बाद सामान्य हो उठती है । इसीमें उसकी गिरती -पड़ती जिन्दगी चलती है ।

सुषमा जीवन संग्राम में जिस जटिलता में उलझी है, वह उसे शारीरिक से अधिक मानसिक यातना दे रही है । इस प्रकार उषा प्रियंबदा का यह नारी पात्र शारीरिक कम, मानसिक यंत्रणा में अधिक उलझा है । यह मानसिक उतार-चढ़ाव उसे गरिमा देता है ।

❋ नील - उपन्यास का महत्वपूर्ण पुरुष पात्र नील है । अच्छी खासी नौकरी कर रहा है । रंग-रूप, पढ़ाई-लिखाई किसी बात में कोई कमी नहीं । बस, आधुनिकता के रंग में आकर तीस वर्ष तक कंवारा फिर रहा है । आर्थिक दृष्टि से संपन्न है । कार में आना जाना करता है । नील का भरा पूरा परिवार है । मां चाहती है बेटा विवाह कर ले । पर नील टालता रहता है ।

नील एक दिन मौसी की दी पैकेट सुषमा के पहुँचाने गर्ल्स हास्टल जाता है । वहाँ उसकी भेंट सुषमा से होती है । सुषमा के यहाँ वह बड़े संकोच में जाता है । वहाँ कॉफी लेने के बाद कुछ झिझक कम होती है । धीरे-धीरे रेस्तोरां जाने लगता । करीब आता है । खुलता है । पर इस बीच हास्टल कालेज एवं आसपास चारों ओर रिश्ता चर्चित होने लगता है ।

आखिर खीझ में भर कर सुषमा नील को आने से रोक देती है । इससे खुद भी टूट जाती है । इन रिश्तों को कोई सह नहीं पाता तो सुषमा झुंझला जाती है । नील को न आने के लिए ताकीद कर देती है । अब नील अपनी कंपनी को कह कर हालैंड चला जाता है । सुषमा सह नहीं पाती । नील के बिना जीवन धारण मुश्किल होता है । नील अपने को चुपचाप सुषमा के जीवन से अपसारित कर लेता है ।

नील का चरित्र एकदम साफ-सुथरा एवं तर्क संगत लगता है । उसमें कहीं जटिलता नहीं, कोई ग्रंथि नहीं, कोई द्वंद भी नहीं । माँ वगैरह संपर्क की बात कहती हैं तो वह उससे भी आगे बढ़कर स्वाभिमान के लिए छोड़ देता है । यह उसके चरित्र का दृढ़ पक्ष है । अपनाने के लिए वह सारे कष्ट झेलने प्रस्तुत होने पर सुषमा की दुर्बलता देख सीन से पीछे हट जाता है । वह मौके का फायदा नहीं उठा कर सुषमा का भोग नहीं करता । उसमें कहीं छोटी बुद्धि नहीं । समझाने का पूरा प्रयत्न करता है । फिर भी सुषमा राजी नहीं होती, वह स्वाभिमान से आहत नारी का मर्म समझने में विफल रहता है । अत: हालैंड चला जाता है, सुषमा को छोड़ कर । सुषमा की मजबूरी समझता है । फिर भी उसमें स्वाभिमान की ऐसी ग्रंथि है, वह उभर नहीं पाती । तब नील के पास चारा नहीं रह जाता । वह उसे पीड़ा देना नहीं चाह कर भारत छोड़ देता है ।

इस प्रकार नील का चरित्र खूब आदर्श, उच्चांग एवं त्याग भाव का प्रतीक है । वह सुषमा के जटिल चरित्र के सामने एकदम स्पष्ट, निर्न्द्वंद, निर्णय में त्वरित और फिर उसमें न उलझने वाला चरित्र है । लेखिका ने यह चरित्र एकदम सीधा परंतु संवेदनशील रचा है । स्थिति को समझने में कभी नहीं चूकता । इसे अहं नहीं कह सकते । वरन सुषमा के लिए स्वयं को अपसारित कर छोड़ देने वाला उदार व्यक्तित्व है । तभी सुषमा भी उसे बिसूर रही है । परंतु वह सीधा आगे बढ़ जाता है । उसके जीवन में घटना बहुत कम है । बोलता कम है । पर जब जो कहता उसमें अर्थ भरपूर रहता है ।

2.1.4 भाषा एवं वातावरण :

यह उपन्यास पहली बार I962 में छपा है । अर्थात् आजादी के तुरंत बाद का भारतीय जीवनांश इसमें आया है । समाज क्रमश: बदल रहा है । आर्थिक स्थिति और सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं । रेस्तोरां कल्चर का प्रवेश हो रहा है । परंतु कुंवारी अध्यापिका का दूसरे से मिलना स्वीकार्य नहीं हो पा रहा । सुषमा का यह बंद समाज में खुलापन उसकी बड़ी समस्या बनता है ।

प्रेम का अपना पारंपरिक रूप अब बदल रहा है । नारी क्रमश: नौकरी करने बाहर निकलने लगी है । पढ़ाई कर आधुनिक परिवेश में वह अपना अस्तित्व जाहिर कर रही है । ऐसे में नील और सुषमा का करीब आना बड़ी समस्या बन जाता है । यहाँ तक कि प्रिंसिपल उससे इस्तीफा मांग लेती है । इसी मुद्दे पर नारी घुट-घुट कर जी रही है । उसे खुल कर सांस लेने या कहीं बाहर घूमने की आजादी नहीं ।

परिवार, कालेज, बजार, सहेलियाँ हर कदम पर घूर -घूर कर देखी जा रहा है । वह जटिलता रहित जीवन कैसे जीये । हरदम सेक्स को ही उसके सारे कार्यकलाप का मानदंड माना जाता है । उषाजी ने इस उपन्यास में खुल कर आ रही नारी की प्रारंभिक दशा का अत्यंत मार्मिक चित्र रखा है ।

सुषमा के द्वंद्व में व्यक्तिगत प्रेम और पारिवारिक दायित्व दोनों को आमने-सामने रखा है । सुषमा त्याग के जरिये अपना -नील के प्रति प्रेम का बलिदान कर देती है । उसे नौकरी बचानी है । अत: समाज में बदनाम नहीं हो सकती । इस प्रकार 'मनमसोस' कर रह जाती है । सारा कुछ सह लेती है । न चाहते हुए भी नील को दूर कर देती है । वह हालैंड चला जाता है ।

यह सारा कथनाक बहुत सरल और सहज भाषा में रचा गया है ।

नारी जीवन की विडंबना व्यक्त करने वे संकेतों का सुन्दर प्रयोग करने में समर्थ हैं । तभी छोटे-छोटे पैराग्राफ ही नहीं, छोटे-छोटे वाक्य भी उन्हें अत्यंत प्रिय हैं । उषा विदेश रह कर आयी है । पर निर्मल वर्मा की तरह विदेशी वातावरण या विदेशी शब्द प्रयोग विशेष नहीं मिलता । वरन इन पात्रों में हमें हिंदी की ठेठ अपनी भाषा और मुहावरा मिल जाता है । इस दृष्टि से पाठकीय आकर्षण पाने में सफल रही हैं । इस भाषा का अपने में एक विशेष गठन है जो नाटकीय प्रसंगों को भी एकदम यथार्थ बना देता है । पात्र और स्थितियाँ बदलते परिवेश को प्रस्तुत करने में समर्थ हैं ।

2.1.5 नामकरण -शीर्षक :

उषाजी ने इस उपन्यास का एकदम अनूठा नाम रखा है । यह सारा घटनाक्रम कालेज एवं हास्टल में घटता है । उस विशाल बिल्डिंग की बनावट ऐसी है कि उसमें अनेक खंभे हैं । एक दिन नील बैठे-बैठे खंभे गिनने लगता है - वह पचपन तक ही गिन पाता है । याने वह इस इमारत को धारण करने वाले एक-एक खंभे की तरह सुषमा को भी जड़ खंभा मान लेता है । उसमें परिवर्तन की संभावना नहीं ।

परंपरा की इमारत । इसमें समाज गठन का वातावरण है । सारी लड़कियाँ और अध्यापिकायें अपने -अपने ढंग की अजब हैं । कोई बिल्ली पालती है । कोई गप्पेड़ी है । कोई षडयंत्रों में माहिर है । इस तरह इन खंभों के साथ ये लाल दीवारें भी हैं । इसमें जीवन तो है पर जीवन को आगे लेने की गतिशीलता का अभाव है । सुषमा नील तक को ग्रहण नहीं कर पाती । मानो उस भवन का एक खंभा बन कर रह गई है । उसमें सब कुछ है आगे बढ़ने की सारी बातें हैं । परंतु परिस्थितियों की दास बनी है । अत: वह खंभे और दीवारों की तरह जड़ता से ग्रस्त हैं । इस अर्थ में कथानक का शीर्षक अत्यंत सांकेतिक रूप ले लेता है । यद्यपि कथा एक सुषमा की कही है । पर वह तो एक प्रतीक है, यहाँ ऐसे कई खंभे खड़े हैं । उषाजी उपन्यास में इस सारे जड़ रूप को खंभों के माध्यम से व्यक्त कर रही हैं ।

चिंतन का एक ही धुरी पर घूमता रूप उसे घेरे है । मानो इन लाल दीवारों से खंभे घिरे हुए हैं जो इस ऊँची, विशाल बिल्डिंग को थामे हैं ।

2.1.6 'पचपन खंभे लाल दीवारें ' में नारी विमर्श :

'पचपन खंभे लाल दीवार' .. उपन्यास नारी विमर्श को लेकर रचा गया महत्वपूर्ण उपन्यास है । हालांकि नारी केंद्रित 'चित्रलेखा' जैसा उपन्यास काफी प्रसिद्ध हो चुका था । भगवती बाबू ने परंतु वहाँ समस्या नारी की नहीं, पाप-पुण्य की समस्या प्रस्तुत की है । यहाँ पर आजादी के बाद मुख्यत: नारी के अंतर्मन में झांक कर विवेचन विश्लेषण किया गया है ।

इसका पूरा कथानक सुषमा के इर्द-गिर्द घूमता है । नील भी जो कुछ है सुषमा को ले कर है । इस कथानक में स्त्री की देह, उसका मन, उसके परिवार और सामाजिक रिश्तों सबमें लेखिका ने नारी की स्थिति पर प्रकाश डाला है । विविध प्रसंगों में सुषमा के कार्य, उसकी गति विधि, नारी का अंतर -वाह्य केवल एक भोग्य वस्तु रूप में ही नहीं है । समाज का उसके प्रति दृष्टिकोण और उस पर नारी की संवेदनशील प्रतिक्रिया व्यक्त हुई है ।

सुषमा का बाहरी रंग, रूप, सौन्दर्य, अंग -यष्टि से अधिक प्रभावशाली उसका चिंतन, उसकी प्रतिक्रिया, उसका अंतर्द्वंद है । सुषमा चौराहे पर है । अत: विचलित है ।

यह उपन्यास स्वातंत्र्योत्तर भारत में पढ़ी-लिखी कामकाजी महिला पर पड़े बंधनों पर प्रकाश डालता है । नारी परिवार के प्रति समर्पित होकर अपना व्यक्तिगत सुख-दु:ख भूल जाती है । जरा-सा सुख देखने किसी से मिल जुल लेती है तो हजार आँखें उसपर चौकसी करती हैं । उसे बदनाम करती हैं, व्यंग्य करती हैं । यहाँ पर स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी शत्रु बन जाती है । वह ईर्ष्या, द्वेष, जलन षडयंत्र आदि क्या -क्या नहीं कर सकती । यहाँ तक कि सुषमा के लिए सामान्य जीवन जीना कठिन हो जाता है । नौकरी करने में अड़चन आती है । आखिर उसे पीछे हटना पड़ता है । सारे अंतर्द्वंद्व, सारी पीड़ा और घुटन को समेट कर वह नील से पीछे हटती है या उसे धक्का देती है । इस उपन्यास में परिवर्तन के दौर से गुज रहे समाज में संघर्ष करती नारी की पीड़ा वर्णित हुई है । अंधविश्वास , रूढ़ियों और कुसंस्कारों से छूट रहे समाज में नारी के कदम किस प्रकार बढ़ते हैं ; लड़खड़ाते हैं । वह टूटती है, परंतु कहीं झुकती नहीं । छोटे-मोटे लोभ में अपना अस्तित्व नीचे नहीं गिराती । संभलती है । अपना व्यक्ति का स्वार्थ बलि कर फिर टिकी रहती है । यहीं उसका दृढ़ चरित्र सामने आ रहा है ।

नारी अंतर्द्वंद्व इस उपन्यास के प्राण हैं । सुषमा केवल आदि, कल्पना और हवाई नारी नहीं है । वह भी हाड़-मांस की बनी औरत है । उसकी मानवीय इच्छा - आकांक्षा है । शारीरिक जरूरत है । चोट

लगने पर पीड़ा होती है । प्रिंस(नील) आने पर या रेस्तोरां में कॉफी पीते समय खुशी होती है । विविध भावों से पूर्ण वह एक संवेदना भरी पूर्ण स्त्री है । आधी-अधूरी अथवा अतिरेक से भरी फूहड़ता कहीं नहीं । उषाजी ने इस नारी में अपने पद के प्रति मर्यादा भाव जीवित रखा है । परिवार के प्रति दायित्व रखा । समाज के व्यंग्य -विनोद के प्रति भी संवेदनापूर्ण रखा है ।

सुषमा का जीवन बंद कमरे में घुट-घुट कर नहीं कटता । समस्याओं से लड़ती है । पढ़ाई कर प्राइवेट नौकरी कर रही है । परंतु अनैतिक आकांक्षा देखते ही वह नौकरी छोड़ देती है । नई जगह चली आती है । हास्टल वार्डन के रूप में पूरी ईमानदारी से कर्त्तव्य निभाती है । हास्टल में व्यवस्था लाती है । अनुशासन हुआ । लेकिन नील के आने के बाद आया परिवर्तन उसकी अपनी उदासी दूर करता है । पर इसे सामाजिक स्वीकृति नहीं मिलती । अब जग कुतर्क देकर उसे अफावाहों के घेरे में डाल देते हैं । वह फिर एक बार बेदाग तन कर खड़ी हो जाती है । पूरी दृढ़ता से क्लास में पढ़ाती है । हास्टल से हटाने के सारे षडयंत्र वह खत्म कर देती है । यहाँ सुषमा का दृढ़ चरित्र और स्वभाव की स्पष्टता परिलक्षित होती है । इस प्रकार नारी नये क्षेत्र (नौकरी) में आकर जिन समस्याओं का सामना करती है, उषाजी ने खूब सूक्ष्मता पूर्वक उसका संवेदनपूर्ण चित्रण किया है ।

वास्तव में नारी तन और मन दोनों का विश्लेषण और विवेचन इस उपन्यास की बड़ी विशेषता है । इसमें आदर्श और यथार्थ दोनों को सुषमा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है । इसमें भारतीय नारी विमर्श की सुदृढ़ आधारशिला रखी गई है ।

2.1.7 अभ्यास प्रश्न :

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

क) 'पचपन खंभे लाल दीवारें ' में नारी को किस रूप में प्रस्तुत किया गया है, स्पष्ट कीजिए ।

ख) इस उपन्यास में नये समाज का जो चित्र आ रहा है, उसको रेखांकित कीजिए ।

ग) इस उपन्यास के मुख्यपात्र 'सुषमा' का चरित्र स्पष्ट कीजिए ।

घ) 'पचपन खंभे लाल दीवारें ' में नील का महत्व प्रतिपादित कीजिए ।

ङ) इस उपन्यास के कथानक की समीक्षा कीजिए ।

च) इस कथानक में वातावरण की विशेषता स्पष्ट कीजिए ।

छ) उपन्यास के तत्त्वों के आधार पर प्रस्तुत उपन्यास की समीक्षा कीजिए ।

ज) 'पचपन खंभे लाल दीवारें ' उपन्यास में वर्णित नारी जीवन की समस्याओं का उल्लेख कीजिए ।

निम्न प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

क) शीर्षक की सार्थकता बताइए ।

ख) आज के वातावरण में नारी जीवन की समस्याओं पर लेखिका ने क्या टिप्पणी की है ?

ग) हॉस्टल के वातावरण पर प्रकाश डालिए ।

घ) नारी के बदलते रूप में भी उसके संघर्ष को स्पष्ट कीजिए ।

ङ) कामकाजी औरत की समस्या पर प्रकाश डालिए ।

निम्न के अतिसंक्षिप्त उत्तर दीजिए :

i) पचपन खंभे कौन गिनता है ?

ii) सुषमा की दो सहध्यापिकाओं के नाम लिखिए ।

iii) सुषमा के परिवार में कौन-कौन हैं ?

iv) नील देश छोड़ कर कहाँ जाता है ?

v) क्या सुषमा नील से मिलने एयरपोर्ट जा पाती है ?

2.1.8 सहायक ग्रंथ :

I. स्त्री विमर्श की उत्तरगाथा - अनामिका - सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली,
3320 जटवाड़ा, नेताजी सुभाष रोड, दयागंज, नई दिल्ली

2. इक्कीसवीं सदी की ओर सं. - सुमन कृष्णकांत , राजकमल प्रकाशन

3. स्त्री संघर्ष का इतिहास - राधाकुमार - वाणी प्रकाशन

4. अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य - राजेन्द्र यादव, राजकमल प्रकाशन

5. वर्तमान साहित्य - मार्च 2011 अंक

(ख) ठीकरे की मंगनी

2.2.1 लेखिका का परिचय (नासिरा शर्मा)

आपका जन्म I948 में इलाहाबाद में आजादी के बाद हुआ । वहीं पढ़ाई की । खुले विचार शुरू से ही रहे । अत: विवाह उन्होंने बिना जाति धर्म का विचार किये रचाया । परंतु अपनी पहचान रखने के लिए नाम नासिरा ही रखा ।

ईरानी समाज और राजनीति से सुपरिचित हैं । हमेशा पत्र-पत्रिकाओं से जुड़ी रही हैं । मुसलीम परिवार में परवरिश और बड़ी होने के कारण उसका रेशा-रेशा उनका परिचित है । वहाँ के सारे माहौल को गहराई से अनुभव किया है । अत: अपने कथा साहित्य में खूब बेबाकी से उन पर प्रकाश डाला है ।

प्रकाशित रचनाओं में कुछेक हैं -

उपन्यास - सात नदियाँ एक समंदर, जिन्दा मुहावरे, अक्षयवट, बूंद

कहानी संग्रह - शामी कागज, पत्थरगली, संगसार, सबीना के चालीस चोर, खुदा की वापसी, दूसरा राजमहल, बुताराना ।

इसके अलावा लेख संग्रह, नाटक, अनुवाद, बालसाहित्य और इंटरव्यू भी छपे हैं । कुछ टीवी सीरियल और टी वी फिल्मों में भी हाथ दिया है ।

संप्रति दिल्ली में रहती हैं ।

2.2.2 कथानक :

महरुख बंद कमरे में कोफ्त में भरी है । अंदर तूफान उठता और बैठता जाता है ।

महरुख का जन्म जैदी खानदान में चार पीढ़ी बाद कोई लड़की पैदा हुई । खूब खुशियाँ मनाई गई । सबने आनन्द उत्साह से स्वागत किया । दादा के नेह और प्यार दुलार में वह बचपन में ही खुले विचारों में रहती आयी है । क्रमश: अल्हड़ बन जाती है । दादी के लाड़ के आगे मानो लड़कों की उपेक्षा हो रही है । पर वह बड़ी है । चाचा-ताऊ वगैरह के कुल बाइस बच्चों में सबसे बड़ी है । सब मानते हैं । इतना सामूहिक परिवार बड़ी हवेली में रहता है ।

कुछ बड़ी होनेके बाद उसका बाहर जाना बंद । घर में ड्रामे-नाटक खेलते । लेकिन उम्र बढ़ती गई, उस पर पाबंदियाँ भी बढ़ने लगी । सगाई नानी के यहाँ हो गई थी । नन्ही थी तभी यह 'टोटका' कर

दिया था । अब लड़का एम.ए. अलीगढ़ में पढ़ेगा । महरुख बी.ए. करेगी ।

बी.ए. में फर्स्ट डिवीजन ! बाद में वह भी अलीगढ़ क्यों पढ़ाई करे ? मगर कुंवारी लड़की को कैसे बाहर भेजें ? खैर, तय हुआ, पढ़ाई शुरू करे, छ: महीने बाद दिसंबर में शादी हो जायेगी ।

रफत (भावी पति) भाई साथ लेकर ऊँची पढ़ाई करने दिल्ली ले जाते हैं । राह में नकाब हटाते हैं । स्वयं भी खुल कर बात करते हैं । रूढ़ियों से हटा एक सही औरत बनाना चाहते हैं ।

दिल्ली में रफत एम फिल और महरुख एम.ए. में थे । वह वाकई लड़की से महान राह में औरत बन रही है । नये अदब कायदे , तौर-तरीके सीख रही है । रफत भाई साम्यवादी पार्टी के सदस्य हैं । उसे पढ़ने साहित्य देते हैं । वह पढ़ कर जान लेती है - यह सब नया नहीं । पर शर्म से कुछ कर नहीं पाती ।

नवंबर में परीक्षा देकर घर लौटती है । हमेशा फर्स्ट आनेवाली महरुख सेकेंड हो गई । इधर नानी बीमार होकर चल बसी थी । जिसकी उसे कोई खबर नहीं दी गई । यहाँ दादी भी रमजान के महीने में चल बसी ।

रफत ने दादी के यहाँ भी अपनी बातें समझा कर तैयार कर लिया वह खानदान का मसीहा बन जाता है । पिता जिस बहन की बात करते हैं, वह अब 'शहर का दर्द' बन गया । महरुख पढ़ाई पूरी कर लेती है ।

बाद में वहीं गांव के स्कूल में मास्टरनी बनती है ।

वहाँ वह किसी को अपने अंदर झांकने नहीं देती । किसी में रुचि भी नहीं लेती । रुटिन जिन्दगी में बंद है । रफत ने जींस आदि पहन कर माडर्न बनाया । हर रविवार इंलिश मूवी दिखा अंग्रेजी सिखाई, नाचना सीखा । पिकनिक गई तो वहाँ भी झिझक खुली । क्रमश: रवि करीब आने लगा । एक विषय पर भिन्न दृष्टि से एमफिल की थीसिस लिख रहे थे । दिल्ली में टूरिस्ट जगह घूमने लगी उसके साथ । एक दिन कॉफी पीने महरुख को कमरे में बुलाया । गई, वह अचानक मौके का लाभ लेने लगा, उसने झटक दिया । बिना इजाजत के कैसे साहस कर सकता है ? छूट कर वह कमरे से बाहर आ गई । मगर रवि ने कुछ दिन बाद कहा - रूढ़िवादी और परंपरा में डूबी हो । आधुनिकता नहीं है । यह सुन वह चुप रही । उसे लगा कोई यूं ही नहीं घुमाता -फिराता इस सादी दोस्ती के स्वांग के पीछे वही नंगापन है ं यहाँ वही जानवरों का हिस्सा है । वह दिखावे के आक्षेप से चौंक जाती है ।

अपने आप सावधान होने लगी है । फूंक-फूंक कर कदम रखती है । कुछ दिन बाद रफत अमरीका जाता है । पीएच.डी करने । हवाई अड्डे पर कई लड़के -लड़की छोड़ने आते हैं । खूब प्यार जताते हैं । अमेरिका में रफत किसी और के संग 'लिविंग टुगेदर' जैसी जिन्दगी जीने लगा है । वह

चौकती है । धीरे-धीरे समझ गई कि रफत ने उसका हक दूसरी औरत को दे दिया है । यही नहीं अमी, अबू, शाहिरा, खाला कोई अपना नहीं, सबने छला है ।

आखिर सत्य का सामना करती है । वह कस्बे के स्कूल में आ जाती है । स्कूल में बदलाव हुआ । उन्नति हुई । स्टाफ बढ़ा । कमजोर बच्चों को घर बुला पढ़ाने लगी । रिजल्ट अच्छा आने लगा ।

उसका सादा रहन-सहन । चमक-दमक से दूर । पांच हजार की आबादी । ज्यादातर गरीब लोग हैं । नोकरानी लछमनिया को उसने जो स्वेटर दी, वह उसने अपने पति को दे दी । अत: दूसरी निकाल कर दी ।

साल भर बाद नौकरी मिली । गांव में गाइड प्रो. मिश्र का स्टूडेंट था । रिचर्स करता है ।

मदर को कहा । रासिन पीटर सर्व की मदद करती । सर्व पांडिचेरी महीने भर रह कर सामग्री संकलन कर लाता है महरुख सहयोग करती है । उसकी थीसिस भी आगे बढ़ाती है । फिर बस्ती लौटेगी । पर मिश्र चाहते हैं वहीं लेक्चरर बने । बात टाल देती है ।

उसने बच्चों के लिए एक पुस्तिका लिखी -कहानी के रूप में । उसकी साथ वाले मजाक उड़ाते हैं । कुछ दिन बाद लगा इस गांव में ज्यादा दिन रह नहीं पायेगी । तीन जन - संजय, अरोड़ा, इशरत षडयंत्र कर उसे बदनाम करना चाहते हैं । वह मेहतर किसान वगैरह से बात करती है । स्कूल बदनाम होता है ।

फिर चुनावी माहौल परेशान करता है । स्कूल का हिसाब बिगाड़ दिया प्रचार के शोर ने । गांव में सूखा पड़ा तो सही स्थिति जान कर दु:ख में डूब जाती है । हरा भरा जरा है । बाकी भूख है ।

बचपन की यादें बीच-बीच में आ जाती है । वह स्कूल के अभावों पर हेडमास्टर से चर्चा करती है ।

लछमनिया (उसकी नौकरानी) पेट दर्द से परेशान । जांच करवाने डाक्टर विमला को बुलवाया । सारे गांव में चर्चा हो गई ।

स्कूल के दो अध्यापकों की पिटाई हो गई । हड़कंप मच गई । वे कई बार महरुख के घर की कुंडी खटखटा गए - गंदी हरकत करने । गांव वालों ने देख लिया और पीट-पीट कर अस्पताल भेज दिया । वैसे ही चाय के बहाने मजाक करने लगे तो बुरी तरह झिड़क दिया । इसके बाद उसके पास बैरंग खत आने लगे, इनमें उसके विरुद्ध उलटा-सीधा लिखा होता । बहुत विचलित होती है । पर फिर बहस न कर सह लेती है ।

छुट्टियाँ होती है, महरुख घर आती है । रफत मिया अमेरिका से लौटे हैं । मगर मेम साथ में नहीं लाये । सब अचंभे में थे । दस साल बाद लौट कर महरुख से मांफी मांगते हैं । कैफियत देते हैं - डिग्री लेने में बाधा की । तीन साल पहले सब खत्म हो गया । मगर महरुख को लगा -सब गलत हुआ है।

रफत महरुख के घर आकर माफी मांग कर विवाह का प्रस्ताव रखता है । पर महरुख नहीं पसीज पाती । गांव के स्कूल लौट आती है । हेडमास्टर के अचानक देहांत का दु:ख होता है ।

रफत स्कूल आकर हफ्ते भर रहता है । बहुत समझाता है । शादी के लिए सारे तर्क देता है । पर महरुख हां नहीं करती । लौट कर दिल्ली में लेक्चरर बन जाता है । युनिवर्सिटी में जगह ढूंढता है । लेकिन महरुख को भूल नहीं पाता । महरुख के सामने उसका भविष्य स्पष्ट है । वह ऐसी जिन्दगी नहीं जी सकती । फिर तर्क चलते हैं । दुबारा प्रस्ताव रखा तो महरुख ने सबके सामने कहा -

रफत बड़े भाई हैं । इसी तरह आदर करती हूँ । इसके सिवा कुछ नहीं ।

तब रफत भी अन्यत्र विवाह की बात पर सहमत हो जाता है ।

यह पहली बार है कि औरत मर्द को इनकार कर रही है ।

वह अकेली जीने की सोच मन बना प्रस्तुत हो चुकी है ।

रचना का भी यही हाल है । पति बुआ की लड़की के प्रेम में फंस गया । उससे बच्चा चाहता था । अत: रचना ने उसे छोड़ दिया । तब से अकेली है ।

इधर डा. विमला हर महीना गांव आती । महरुख के घर पर गांव की औरतों को मुफ्त देखती है ।

महरुख स्कूल की प्रिंसिपल बनी । कई नये काम किये । सुधार किये । कुछ विरोधी भी थे पर उन्हें हार माननी पड़ी ।

गांव में जमींदारी के बाद भी नये शोषक खड़े हो गए । लड़ाई जारी रहेगी । पक्के घर बाले फैसला करे ... पर कच्चे वालों की उपेक्षा नहीं हो सकती ।

रफत विवाह करता है । युनिवर्सिटी में प्रोफेसर बन जाता है । महरुख को चैन मिलता है । वह उसकी बीबी का सम्मान भी करती है ।

महरुख पीएच.डी, कर लेती है । नई किताब छप जाती है । अब उसे बड़े सम्मान से काम करने दिल्ली बुलाया जाता है । पर जाने से इनकार कर देती है ।

वह दिल्ली प्रदर्शनी में भाग लेने जाती है । वहाँ पर रफत से भी मिलती है । उसकी पत्नी सुरैया के साथ बहुत स्नेह से मिली । रोकना चाहा । मगर लौट आती है ।

यहाँ आकर प्रोजेक्ट में मदद करना चाह कर भी नहीं कर पाती । तभी अमृता के आत्महत्या के प्रयास की खबर मिली । समझाती है । वह औरत की तरह इंसान है । रिश्ता बराबरी का हो ।

महरुख आखिर रिटायर हो जाती है । भारीमन से चार्ज देकर गांव से बस्ती लौट आती है । वहाँ इतने बड़े घर में ज्यादा बुजुर्ग हैं । उनको जरूरत है । मगर खुद को एकाकी लगता है । इतना बड़ा मकान धीरे-धीरे टूटता गया । बड़े बुजुर्ग एक -एक कर मरते गए । अबू गए, चाचा-चाची गए ... ।

अब अकेले सफर तय करना है । भावनात्मक रूप में कोफ्त होती । उनका बुढ़ापा तो इसने सुधार दिया, महरुख का कौन करेगा ? वह मकान जर्जर हो रहा है । पता नहीं कब कहाँ गिरे ।

अम्मी बराबर सोचती - मेरी बेटी के भाग्य में इतने कांटे क्यों ?

महरुख सोचती औरतों को ठिकरे और कौड़ियों से खरीदना कब बंद होगा ? बोलियाँ लगाना बंद हो । मर्दों के सहारे जीने की मजबूरी खत्म हो । अपनी तरह जीने की आजादी मिलेगी ? ...इन्हीं सवालों में खोयी रहती महरुख ।

विशाल घर बिका, अम्मी भी चली गई । अब महरुख ने अपना सामान बांधा । कहाँ जाये, क्या करें ?

तभी देखा भाभी जहरा ने बेटी को पीटा - क्यों कि वह महरुख बनना चाहती थी । जब कि जहरा को वह मनहूस कतई पसन्द नहीं । हालांकि भाई तनवीर कद्र करता है ।

इस पर महरुख को दु:ख हुआ ।

अब सब अपने -अपने लौटने लगे । महरुख को बहन-भाई अपने साथ रखना चाहते । पर उसने कहा - पिता और पति से हट कर भी औरत का अपना घर हो ! वह वहीं रह जीना चाहती है । जहाँ तीस साल नौकरी की है ।

शाम को गांव लौटी है । महरुख ने पहले ही खत लिख कर मकान वगैरह का इंतजाम कर लिया । आने की खबर भी दी थी । वहीं आकर वह एक कमरे में आकर चैन से लेटती है । फिर सो जाती है ।

2.2.3 **विश्लेषण :**

कथा पूरी एक ही पात्र के चारों ओर घूमती है । महरुख । जन्म के समय वंश में लड़की पैदा नहीं होती, होती है तो जीवित नहीं रहती । नानी ने ननिहाल से आकर अपने दोहते से रिश्ता कर दिया - दो ठीकरे की मंगनी हो गई - दोनों की सगाई हुई । सबने मान लिया । मगर बड़े होने के बाद लड़का अमेरिका पढ़ने जाता है । वहीं मेम से शादी कर लेता है । महरुख को इस उपेक्षा से गहरी चोट लगती

है । कहानी के अंदर यहीं बड़ा मोड़ आता है । वह इसे नारी के प्रति हीनभावना मानती है । जीवन भर इससे उबर नहीं पाती वह पीएच.डी. कर भी स्कूल टीचर बनी रहती है । प्रिंसिपल भी बन जाती है । फिर रिटायर होकर गांव के लोगों की सेवा में सारा जीवन एक ही बात पर टिका है । पहली तो सेक्स के मामले में नहीं झुकती । दूसरे अपनी भौतिक आवश्यकताएँ सीमा में रखती है । तीसरे वह समाज सेवा और ग्राम उन्नति को एक ढोंग नहीं वास्तव रूप में लेती है । उसके कार्य में पूरी तरह ईमानदारी है । आंतरिकता है, सभी से सहानुभूति है । अत: वह पूरे गांव की सहानुभूति पाने में सफल होती है ।

कथानक एक नारी के सीधे सरल और मूल्याधारित जीवन पर है । समाज में फैले सारे ढोंग, दोगलेपन, भ्रष्ट आचारण के बावजूद महरुख अपनी सीमा में रहते हुए बेदाग जी पा रही है । वह दृढ़ता से हर विपरीत स्थिति का मुकाबला करती है । यही उसके ठोस रूप का बड़ा गुण है । कथानक को स्पृंहणीय बनाने में समर्थ है ।

2.2.4 प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण :

*** महरुख –** महरुख का जन्म भरे पूरे परिवार में होता है । वहाँ लड़की का जन्म उत्सव धूमधाम से मनाया जाता है । परंतु स्त्री का जीवन ठीकरी (फूटी हंडी की टुकड़े)की तरह बेमौल है । उसके अपने जजबात का महत्व नहीं । पढ़ाई लिखाई तो कर लेती है । फिर भी रफत से शिशुपन में हुए करार से बंधी है । लेकिन रफत अमेरिका जाकर वचन तोड़ देता है । वह एक दूसरी लड़की से विवाह कर लेता है तो वह उसकी अस्मिता की ललकार है । दस साल के बाद वह लौट कर अकेला आता है । हावार्ड से पीएच.डी. का गर्व है, गुमान है । लेकिन महरुख उसकी परवाह नहीं करती । एकदम तन कर खड़ी रहती है । शहरी-महानगरी आकर्षण से बेखबर अपने जीवन के लिए स्कूल मास्टर बनी । फिर अपने बलबूते पर प्रिंसिपल भी । उसे अपनी मेधा बल पर महानगर का निमंत्रण मिलता है । ठुकरा देती है । गांव की सेवा में । नारी के स्वाभिमान के साथ खड़ी है । बीमार होने पर उसके सही इलाज कराने डाक्टर बुलाती है । उधर आत्महत्या को उत्सुक, पति से उपेक्षा पाने के बाद, उसे स्वस्थ कर, हिम्मत बंधाती । उसका यह संतुलित चरित्र ही उसे महत्वपूर्ण बना देता है । सच्ची ग्राम सेवा में समर्पित है । आज के ढोंग सेवा के युग में महरुख का चरित्र अत्यंत महत्व, सशक्त रखता है ।

वह शुरू में जो निर्णय करती है, अंत तक उस पर टिकी रहती है । वह किसी लोभ या लालच में नहीं पड़ती । ऊँचे पद पदवी का भी आकर्षण नहीं रहता । महानगर भी छोटा पड़ जाता है उसके दृष्टि वलय में । महरुख के चरित्र का यह स्पष्ट होना उसे महान बना देता है । नारी मुक्ति के अतिरिक्त नारों से मुक्त पात्र है । वह पुरुष- नारी दोनों को समान स्तर पर रखती है । जहाँ नारी गलती पर है, महरुख नहीं छोड़ती । पुरुष की लाचारी को भी समझती है । परंतु उसके बहाने समझ उसी तह तक

जाती है । अत: एक बार हाथ जलाने पर वह दुबारा उधर बढ़ने में दस बार सोच रही है ।

महरुख का परिवार के प्रति ईमानदारी भाव शुरू से अंत तक बना है । पर छोटी -छोटी बातों पर नहीं तौलती । इतने बड़े परिवार का सदस्य होने पर भी वह किसी ओर असंतुलित नहीं होती । बचपन से बूढ़ापे तक उसका चरित्र महनीय रहता है । कहीं भी नारी की अस्मिता को आंच आने नहीं देती । स्वयं ही नहीं, सामान्य घरों की अन्य औरतों को भी इसी राह पर चलने को कहती है ।

सेक्स के मामले में वह शुरू से अंत तक एकदम दबंग बनी है । कभी कहीं अपनी दुर्बलता व्यक्त नहीं करती । तभी हर समस्या को बड़ी स्पष्टता से सामना करने में सफल हो पाती है । कोई आक्षेप करे, वह परवाह नहीं करती । अंत में मां-बाप मरने, घर बिकने, रिटायर होने के बाद भी वह सीधे बेहिचक गांव ही लौटती है । उसका गांव के प्रति मोह भावुकतापूर्ण नहीं , एक मूल्याधारित लगाव है । समाज के विशेष कर दुर्बल वर्ग के साथ लगाव के चलते काफी कुछ कुरबान करती है । लेकिन उसके साथ बदले में गांव का स्नेह भी पाती है । इसीसे उसे सुकून मिलता है । इस प्रकार महरुख सामान्य जीवन में असामान्य चरित्र बन कर उभरती है ।

❋ रफत – भारतीय समाज में विदेश जाने वाले पात्रों का एक प्रतिनिधि पात्र है । दुर्भाग्य से सामना महरुख से होता है । सारी चमक फीकी पड़ जाती है ।

रफत कैरियर बनाने में माहिर है । पढ़ना, अमेरिका जाना, हावार्ड से पीएच.डी. और फिर लेक्चरर से प्रोफेसर ... वी.सी. शिक्षामंत्री तक की सीढ़ियां - यह है उसके जीवन का रास्ता, मुकाम और लक्ष्य । इसीमें वह महरुख की उपेक्षा कर अमेरिकी मेम को सीढ़ी बनाता है । पीएच डी के बाद उसे छोड़ भारत आता है । फिर से महरुख की ओर झुकता है । पर वह उस रास्ते पर चल कर साथ देना नहीं चाहती । अत: शादी से इंकार कर देती है । सारी चकाचौंध से बची रहती है । वह फ्रांस जाना, मीटिंगे... में सदा व्यस्त रहता । सपने आकाश को छूते । रफत खूब मेहनती आधुनिक युवक है । भौतिकतावादी मूल्यों को लेकर घोषित साम्यवादी है । अत: भारतीय परंपरागत मूल्यों पर कभी नहीं टिक पाता । वैसे ही सेक्स के मामले में बहुत दृढ़ नहीं । सफलता के लक्ष्य में ये छोटी -मोटी बातें हैं । उसके अनुरोध में आंतरिकता नहीं और कोई परिवर्तन व्यवहार में नहीं । तभी महरुख स्वीकार नहीं कर पाती । रफत उपेक्षा कर सुरैया से विवाह कर लेता है । वह भी उन्हीं कारणों से सुखी नहीं हो पाती, जिन के कारण महरुख ने इनकार किया था । उसका व्यवहार अपने राजनैतिक मूल्यों के कारण ऊबड़-खाबड़ बन जाता है ।

रफत की परिवार के प्रति नजर भिन्न है । वह सबको दिल्ली ले जाना चाहता है । पर यह संभव नहीं । ऊबकर लौट जाता है । वास्तव में दिल्ली याने महानगर । गांव का उसे कुछ अच्छा नहीं

लगता । गांव के मूल्य उसके लिए बदहाल हैं । वहाँ आदमी नहीं जानवर रहते हैं ।

अंत में वह दिल्ली लौट जाता है । वहाँ उठने की संभावना खूब है । अत: वह गांव की पूरी तरह उपेक्षा कर रहा है । मूल्य नहीं रहे तो योजना फीकी पड़ जाती है ।

2.2.5 भाषा एवं वातावरण :

नासिरा शर्मा का उपन्यास पूरी तरह मुस्लिम परिवार को लेकर लिखा है । अत: इसमें वातावरण भाषा, व्यवहार, पर्व-त्यौहार, सब मुसलमानी है । हिंदी में नारी विमर्श पर लिखा यह बहुत लोकप्रिय उपन्यास है ।

इसके लगभग सभी पात्र उर्दू का व्यवहार करते हैं । अत: कई ठेठ अरबी -फारसी के शब्द भी सहज भाव से आ जाते हैं । वह तो लाजिमी है । परंतु कई मुसलमानी पर्व, उनकी परंपरा, उनके विश्वास, चिकित्सा संबंधी टोटके आदि एकदम अनबूझ होते हैं । सूक्ष्म रूप में उनकी जीवन शैली का वे परिचायक होते हैं । जन्म के समय , शादी के समय, मृत्यु के उपरान्त होने वाले सारे लोकाचार रीति रिवाजों की भाषा सामान्य हिंदी भाषी के लिए कठिन हो जाती हैं । फिर भी कहीं -कहीं फुटनोट देकर संप्रेषणीय बना दिया गया है ।

इस उपन्यास में पढ़ाई -लिखाई का एक विशेष वातावरण है । दोनों मुख्य पात्र पीएच.डी. करते हैं । कुछ समय के लिए एक विदेशी पात्र भी आता है । वह भी रिसर्च कर रहा होता है । महरुख के गाइड डॉ. मिश्रा हैं और रफत के हावर्ड विश्वविद्यालय से है । एक विदेशी पत्रों में छपता है दूसरी के लेख भारतीय (दिल्ली) में छप कर प्रशंसा देते हैं ।

भाषा केवल शब्दों, वाक्यों का समूह नहीं होती । पूरी संस्कृति, परंपरा और तहजीब की वाहक होती है । यहाँ हिंदी होते हुए भी मुसलमानी परंपरा और तहजीब कदम -कदम पर है । विवाह के तौर-तरीकों, नियम -कायदों पर काफी कुछ लिखा है ।

उदाहरण के तौर पर नामावली ले लें रफत, तफीक, महरुख, शाहिद, गुलनार, रसीद । रिश्तों में ददिहाल, खाला, वारिस, बाजी, जन्नानुन आदि हैं । उसी प्रकार एक-एक मुहावरे का सुन्दर प्रयोग किया है ।

होश के नाखून लो, बरपाहोना, कुरबानी का बकरा, जलजला आना, ख्वाहिश का अहतराम करना, दामन पर नमाज पढ़ सकना, तबलीगी, अंखियन बीरबहूटी जैसा लाल होना ।

इसके अलावा कुछ देहाती पात्र हैं जैसे - गनपत काका, लछमनिया, इशरत, इनकी भाषा और इनका लहजा ठेठ देहाती रखा गया है । जैसे का कहे, अपनी बिपदी तो से, बिट्टो रानी । हियां तो हम न

सावन हरे, न भादौ सूखे । यह पूरा वाक्य भोजपुरी का है । उसकी दशा, मन का गुबार, शोषण, पारिवारिक दशा... सब बयान कर रहा है । खड़ी बोली हिंदी में उस संजीदगी में नहीं रखा जा सकता ।

इस प्रकार विविध चरित्रों के लायक विविध स्वर और विविध क्षेत्र की भाषा रखकर आपने उपन्यास को खूब ऊंचाई प्रदान की ।

वातावरण अंकित करने में काफी सतर्क रही हैं । प्रकृति के विविध रूप, मौसम के विपरीत रंग, महानगर की भीड़, गांव की साधारण जिन्दगी, चुनावी दंगल, विशाल परिवार की भाग -दौड़ और अपनी अंतरगंता आदि सैकड़ों परिदृश्य हैं । जो है लेखिका ने बारीकी से रंगे हैं । इतने बड़े घर में क्रमश: बूढ़े होते जाते नई पीढ़ी का उभरना घर का टूटना, बिकना और बिकना - एक युग का बदल जाना है । आजादी के बाद परिवार का टूटना हिंदू -मुसलमान सब में समान रूप से दिखता है । तभी बुजुर्गों के प्रति नई पीढ़ी का दृष्टिकोण भी उल्लेखनीय है ।

यहाँ मार्क्सवाद का आगमन तो होता है परंतु उससे जो दोहरापन भरता उसे भी लेखिका स्पष्ट कर पाती है । महरुख समाज में समान प्रगति, विकास चाहती है । उसी तरह रफत भी पढ़-लिख कर साम्यवाद का प्रचार करने निकलता है । पर दोनों में मूलभूत अंतर स्पष्ट किया है । एक नारे बाजी न कर चुपचाप गांव को उठाने, बदलने लगी है । दूसरा अमेरिका ,फ्रांस तक घूम कर भी सिवा नारेबाजी, दिखावे, अपने प्रगति के सपने पूरे करने में लगा है । शादी को भी इसीकी सीढ़ी बना लेता है । जीवन मूल्य जैसा कुछ बचा नहीं । 'आज ही महत्व रखता है । परंपरा या कल की परवाह नहीं । शरीरवाह के जरिये आगे बढ़ता है । इन सब के लिए उसके जीवन के सारे आचरण हैं । वहाँ शराब, विवाहेतर संबंध परिवार विघटन आदि बातें महत्व नहीं रख पाती । सबको नये भौतिक सांस्कृतिक जीवन पर रख कर समेट रहा है । यहाँ तक कि सेक्स भी सफलता की सीढ़ी बन जाता है । इन सब को खूब सहजता एवं बिना तेज तर्रार, नमकमिर्च मसाले वाली भाषा के साथ रखा है ।

2.2.6 उपन्यास का नामकरण :

नासिरा नारी विमर्श पर लिखने वाली महिला है । इस उपन्यास में नारी को प्रमुख पात्र बनाया है । उस पर हो रहे हर बर्ताव, हर व्यवहार हर जख्म का वह गहराई से पड़ताल करती है ।

शुरू में जिस वातावरण के महरुख जन्म लेती है - वहाँ लड़की का खूब महत्व है । लड़के ही लड़के होने के कारण इतने बड़े परिवार में लड़की होने पर खूब खुशी का माहौल भर जाता है जन्म पर नाचगाना तमाशा होता है । कुछ समय सब सहमे हैं कि लड़की जिन्दा नहीं रहती । अत: नानी आकर एक टोटका करती है । अपने पोते और दोहती को शादी के बंधन में बांधने हेतु मांग लेती है । महरुख की दादी से कहती है ये दोनों 'ठीकरे की मंगनी' अर्थात् लड़की को वह ठीकरा कह संबोधित करती है ।

लड़की की उम्र बढ़ाने उबड़ी, गोबरी, ठीकरी, घींसली, भिखारी, मंगती, आदि अनेक नाम दिये जाते हैं । इनसे नजर नहीं लगती, विश्वास है । नारी को ठीकरी याने तुच्छ और हीन कहा है । हालांकि यह टोटकाभर किया है परंतु यह नाम उसके साथ जुड़ नहीं पाता । बाद में इसी आपसी वचन के देन-लेन पर विवाह की बात पक्की होती है । मगर रफत मियाँ अमेरिका जाकर पीएच.डी. पाने की धुन में इसे तोड़ देते हैं । महरुख को एकदम भूल जाता है । मानो वह विवाह ठीकरी का विवाह है, उसका कोई मूल्य नहीं । तभी महरुख तल्ख शब्दों में कहती है - जब तक औरत को ठीकरी माना जाता रहेगा, तब तक स्त्री समता सपना ही रहेगा । सारे कथानक में इस की छाया छायी रहती है । नारी के साथ व्यवहार में बदलाव बहुत कुछ होना बाकी है । अत: लेखिका ने यहाँ उपन्यास की मार्मिकता और उसके ठोस यथार्थ को ध्यान में रख 'ठीकरे की मंगनी' नाम रखा गया है ।

यद्यपि जिस वातावरण में जन्मी वह नारी के प्रतिकूल है । उसे बहुत ऊंची दृष्टि से नहीं देखा जाता । एकदम मामूली फजूल और बिना जरूरत का जीव कहते हैं । नारी जीवन के इस चक्र को तोड़ने कौन आगे आयेगा ? यह ठीकरी फिर ऐसी ठोस व्यक्तित्व और मजबूत इरादे के साथ जीवन जीती है कि उसका ठीकरी व्यक्तित्व कहीं खो जाता है । अत: यह एक व्यंगात्मक उक्ति रह जाता है । नारी का दृढ़ चेतना वाला रूप और निराश, आत्महत्या तक गिरी नारी को खड़ी कर सजाने में मजबूत भूमिका निभाती है । अत: यह नाम अपनी विशेष भूमिका निभाता है ।

2.2.7 अभ्यास प्रश्न :

दीर्घ उत्तर मूलक प्रश्न :

I) 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास के कथानक की समीक्षा कीजिए ।

2) 'ठीकरे की मंगनी' में लेखिका ने नारी की अस्मिता का किस रूप में चित्रण किया ?

3) भारतीय सामूहिक परिवार के विघटन का चित्र दिखा उसकी समीक्षा कीजिए ।

4) 'ठीकरे की मंगनी' की भाषा की समीक्षा कीजिए ।

5) 'ठीकरे की मंगनी' में लेखिका ने जिस वातावरण को प्रस्तुत किया,
उसकी विशेषता स्पष्ट कीजिए ।

संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

1) महरुख के चरित्र को स्पष्ट कीजिए ।

2) रफत के चरित्र में जो बदलाव आता है, उसका विश्लेषण कीजिए ।

3) लछमनिया अथवा गनेशी काका का चरित्र चित्रण कीजिए ।

4) नासिरा की वातावरण पर दृष्टि स्पष्ट कीजिए ।

2.2.8 सहायक ग्रंथ :

1) 'ठीकरे की मंगनी' - नासिरा शर्मा, किताब घर प्रकाशन

2) नैतिकता के नये सवाल - राजकिशोर , वाणी प्रकाशन

3) स्त्री उपेक्षित - सीमॅन द बावर, हिंद पाकेटबुक , नई दिल्ली

4) हिंदी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र

5) औरत होने की सजा -अरविन्द जैन , राज कमल प्रकाशन

6) आधी आबादी का संघर्ष -ममता जेटली एवं श्रीप्रकाश शर्मा, राजकमल प्रकाशन

7) महिला सशक्तिकरण की कुछ कशिशें - नीरज कुमार

I8) उत्तरशती के हिंदी उपन्यास - एन. मोहन

9) औरत : उत्तर कथा - राजेन्द्र यादव एवं अर्चना वर्मा

10) हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना - डॉ. उषा यादव

11) औरत : कल आज और कल - आशारानी बोहरा

युनिट -III

हिंदी कहानी में नारी विमर्श

3.1 स्त्री -सुबोधिनी

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.2 बानो

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.3 मेरे देश की मिट्टी : अहा

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.4 छोटे खिलाड़ी

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.5 आदमकद

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.6 गुल्लू

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.7 बावजूद इसके

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.8 दूसरा ताजमहल

लेखिका परिचय

कथानक

विश्लेषण

3.9 अभ्यास प्रश्न

***

युनिट -III

हिंदी कहानी में नारी विमर्श

3. हिंदी कहानी में नारी विमर्श :

3.0 भूमिका -

हिंदी में पहली कहानी किसी महिला ने ही लिखी बताते हैं । अर्थात् महिला कथाकारों से शुरू यह यात्रा आज भी लेखिकाओं के कारण अधिक समृद्ध है । हिंदी में लंबी परंपरा है । उसमें वैविध्य का भी भोलापन होगा कि महिला कथाकारों की कहानियों के केंद्र में नारी ही होती है । कहानी जब जीवनानुभव या सामाजिक यथार्थ को लेखन के लिए चुनती है तो व्यक्ति भी प्रतीक बन कर उसे वृहत्तर क्षेत्र में पहुँचा देता है । यहाँ आकर पुरुष -नारी जैसे लिंगाधारित विभेदीकरण की बात कोई मायने नहीं रखती । कहानी कहानी जैसी लगती है उसका रचनाकार पुरुष हो या स्त्री यह प्रश्न छोटा हो जाता है । कहानी की संवेदना उस का मूल आधार होता है ।

फिर भी यह बात उभर कर आती है कि महिला कथाकारों का अधिक संवेदनशील होना और अधिक भावप्रवण होना सदियों के चल रहे सामाजिक वातावरण का स्थायी प्रभाव है । आज वह दबाव -तनाव आर्थिक रूप लेकर उसे दबाव का प्रयत्नशील है । पर नारी सबसे बड़ा कवच शिक्षा पा चुकी है । इसके बल पर आर्थिक शक्ति तो पा सकती है, उससे बढ़ कर जीवन में आने वाले किसी भी तर्क या कुतर्क का वह सही और सटीक ढंग से सामना कर सकती है । अब शिक्षा उसकी अपनी संपत्ति, पूंजी अथवा आधार भूमि बन चुकी है । इन चुनौतियों के चलते उसने भले ही कराटे-बास्किंग की मांग न की हो, परंतु चिंतन का विकास की क्षमता का विकास हो चुका है । वह साहस धीरे-धीरे बढ़ रहा है । इतना स्पष्ट है कि अब वह छुई-मुई नहीं रह गई । न आज वह लाजवंती लता की तरह बात -बात में मुरझाने वाली रह गई है । वरन किसी भी समस्या का डट कर सामना करने में समर्थ है । चाहे आर्थिक हो सामाजिक हो, पारंपरिक हो, अथवा किसी अन्य मुद्दे पर हो, वह चुप नहीं रह सकती । वह खुल कर जवाब दे देती है । यह शक्ति पिछली सदी में ठोकरें खाते -खाते आ गई । युगों की हवा ने भी उसे सचेत किया है । शिक्षा ने उस में आत्मविश्वास भरा है । अत: यह नई सदी की नारी अपने विविध रूपों में

कथानक के माध्यम से ही उभर कर आ पा रही है ।

हमने यहाँ कुल आठ कहनियों को चुना है । समय की दृष्टि से सभी कथाकार साठ की उम्र पार कर प्रौढ़ हैं । नारी पर बाहरी दबाव और पारंपरिक तनाव दोनों से उसमें जो परिवर्तन आ रहा है वह इनका मुख्य बिन्दू है । समकालीन स्त्री के विपर्यस्त संसार को गहराई और विस्तार से इन्होंने प्रभावशाली ढंग से उजागर किया है ।

इतिहास, समाज, परंपरा धार्मिक रीति-रिवाज, भारतीय संस्कृति के मूल्यों -संदर्भों को अपनी समझ और अर्थ को प्राय इन कहानियों में लिया है । इस प्रकार ये व्यापक और गहरे ऐतिहासिक - सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ जाती है । इन कहानियों में बदल रहे सामाजिक वातावरण, सांस्कृति परिदृश्य के संदर्भ में स्त्री की भूमिका और उसके बदलते तेवर स्पष्ट दिख जाते हैं । ये स्थितियाँ, मनस्थितियाँ इन कहानियों के सघन और एकांतिक अनुभवों से जुड़ कर बदलाव और परिवर्तन को रेखांकित कर रही हैं । आज की स्त्री चेतना के यथार्थ के साथ बदलते संबंधों और उस पर पड़ते तनावों को प्रकाशित करती है । इस प्रकार पारंपरिक आचरण - व्यवहार समयानुसार बदलता जाता है । सतर्क और चौकन्ना करता है ।

सारे मोड़ पार कर जो आपने पिछले अध्याय में संक्षेप एवं संकेत में देखें हैं, आज नारी विमर्श उसके यथार्थ का निर्देश करता है । आप आज कुछ प्रमुख नारी कथाकारों की कहानियाँ और उन पर चर्चा इस खंड में देख सकते हैं ।

स्त्री -सुबोधिनी

❋ लेखिका परिचय (मन्नू भंडारी) :

मन्नू भंडारी का जन्म सन् 1931 को भानपुर(मध्यप्रदेश) में आजादी के सोलह साल पहले हुआ । अत: स्वतंत्रता संग्राम के मुख्य संघर्ष में गांधीजी की भूमिका देखी है । वह बचपन था ।

आप के कथानक में हास्य-व्यंग की बजाय गहरा करुण भाव छाया रहता है । उनको महाभोज जैसे प्रतीकात्मक उपन्यास पर काफी प्रशंसा मिली । यहाँ स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद चल रहे मूल्य रहित प्रशासन, जीवन और राजनीति का धारधार चित्रण किया गया है । मन्नूजी ने सबसे उपेक्षित बाल जीवन पर अत्यंत मार्मिक उपन्यास लिखा । आपके उपन्यास - 'आपका बंटा' लिखा । यही कारण है कि उनका कथा साहित्य हिंदी ही नहीं भारत की विभिन्न भाषाओं में अनूदित होकर सराहा गया है ।

भारतीय भाषा परिषद, यूपी हिंदी संस्थान, हिंदी अकादेमी एवं बिरला फाउंडेशन (व्यास सम्मान) आदि महत्वपूर्ण पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है ।

❋ कथानक :

यह कहानी आत्म कथा के रूप में ही प्रथम पुरुष शैली में रची गई है । परंतु इसके शीर्षक से ही स्पष्ट होता है कि लेखिका उद्‌बोधन के रूप में कुछ प्रसंग उठा रही है । उन्होंने स्वीकार किया है - 'आप बीती' के साथ कुछ उपदेश संयोग कर कहानी का ताना -बाना बुना गया है । इसका मूल पात्र अधेड़ उम्र तक पहुँच गया जहाँ युवावस्था के प्रेम जैसे मनोवैज्ञानिक अनुभव से गुजर चुका होता है ।

शिंदे तबादले के बाद नायिका के कार्यालय में आता है । आयकर विभाग में अफसर है । नायिका कामकाजी महिला हास्टल में रहती है । उम्र सत्ताईस । प्रेम करने की उम्र है । आँख मूंद कर शिंदे की ओर ढल रही है । आठ साल तक अपने से सीनियर से प्रेम करती रही ।

बाद में पता चला कि शिंदे शादीशुदा है और उसे एक बच्चा है । नायिका रोष करती है, बिफरती है । शिंदे ने उसके आगे अपने असफल विवाह का रोना रोया । मां-बाप की जिद पर की गई शादी से वह

अकेला पड़ गया है । उसकी करुण कहानी में नायिका बह जाती है । अत: प्रेम बढ़ता ही गया । उसके झूठे और मीठे आश्वासनों में कुछ भी ध्यान नहीं रहा । आखिर उसका एक बड़े शहर में ट्रांस्फर हो गया । फिर भी दोनों का मिलना चलता रहा । होटल या बंद कमरों में भेंट होती । शिंदे उसे तलाक ले लेने का भरोसा देता है । पर नायिका एक दिन उसके घर पहुँच जाती है । शिंदे चालाकी से मिल कर विदा कर देता है । शाम को होटल के कमरे में जाती है । वहाँ शिदें से भेंट होती है तो बरस पड़ता है । वहाँ जाना मूर्खता थी । पत्नी को इस प्रसंग का अंदाज भी न लगे । इस के लिए हर तरह से सावधान रहना पड़ता है । अगर थोड़ी भनक लगी तो वह औरत आफिस, परिवार और सारे शहर में हल्ला मचा कर जीना मुश्किल कर देगी । तुम्हें भी बदनाम कर देगी । इस प्रकार चालाकी से पत्नी पर नफरत और आक्रोश भर दिया । साथ भी जल्दबाजी करने की मूर्खता पक्षर शर्मिन्दा भर कर दिया । नायिका को होश नहीं । वह उसके विश्वास और बातों में उलझी रहती है । सुनहरे भविष्य के खयाल में उसे कुछ याद नहीं रहता ।

प्रेम में अंधी हो गई । नायक ने अब अपना तलाक लेने का भी भरोसा दिलाया । कुछ समय बाद एक निमंत्रण 'गृह प्रवेश' का मिला । उसका मन पूछता उन वादों का क्या हुआ ? यही सब सहज भाव से चलता रहा ।

वह सोचती रही । शहर में उस जगह जा कर देखती है । सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है । आधुनिक ढंग से बना लंबा चौड़ा मकान है । शरीर भी खूब मोटा-ताजा । चेहरा संतुष्ट लगता है । उसका आठ साल का सुन्दर बच्चा है । शिदें पूरी तरह उसमें डूबा हुआ है । अब और कोई संदेह नहीं रहा । अपनी गलतफहमी वह खुद जान लेती है । नायक के सारे व्यवहार को अब तक एक नये सिरे से तौल रही है । परख रही है । अत: वहाँ कहने को, करने को कुछ नहीं बचा था । अपनी बेवकूफी पर जगहँसाई कराने की कोई जरूरत नहीं रही । वह इतनी दूर, इतनी ऊँचाई और इतनी सुरक्षा तक पहुँच गया है कि नायिका सिर्फ देख भर सकती है, उसका कुछ कर नहीं सकती ।

नायिका लौट आती है । सारी असलियत सामने आ खुल जाती हैं । नायक का धोखेबाजी वाला रूप स्पष्ट हुआ । बहाने खोखले और स्पष्ट हो गए ।

अंत में समापन इस प्रकार करती है कि शादीशुदा से प्रेम नहीं करना । दिव्य और महान प्रेम के बहाने ये धोखेबाज अपनी ओछी कामना चरितार्थ करते हैं । ऐसे उपदेश के साथ कहानी समाप्त होती है ।

मन्नूजी ने जीवन के अनेक मोड़ देखे हैं । उतार -चढ़ावों से गुजरी है । अत: भावुकता में बहने से लेकर जीवन की ठोस यथार्थ की धरती तक सारे रंग देखे हैं । अत: यह एक प्रकार की यथार्थवादी कहानी है । जीवन भावुकता में बहने पर कोई लक्ष्य नहीं पाया जा सकता ।

❋ विश्लेषण :

इस कहानी की शैली शुरू से अंत तक सूचना देती है । प्रेम के आजकल बढ़ रहे हलके-फुलके रिवाज, प्रेम की आड़ में नारी के देह का शोषण और उसे बहकाना आदि प्रमुख समस्यायें हैं जिसको तिरछे ढंग से उठाया है । मन्नूजी ने खुल कर इस शोषण और बहकाने के तरीके पर स्पष्ट प्रकाश डाला है । आज के समाज में शादीशुदा वर्ग के अनेक लोग, परिस्थिति का फायदा उठा कर स्त्री का यौन शोषण करने में पीछे नहीं रहते । मन्नूजी ने इस बीमारी के प्रति सचेत करने हेतु कहानी को अत्यंत रोचक बना दिया है ।

वास्तव में मन्नूजी ने समाज की एक अत्यंत करुण स्थिति की तस्वीर खींच कर युवावर्ग को सचेत किया है । ऐसे लोगों के बहकावे से ऊपर उठना तो दूर उलटे जीवन नर्क बन जाता है ।

बाद में इस प्रकार का शोषण अनेक कथानकों का मुद्दा बना । पर मन्नूजी जैसी चोट किसी कहानी में नहीं मिलेगी । अत: मन्नूजी की यह श्रेष्ठतम कहानियों में एक मानी जाती है ।

इस कहानी में कथानक चिंतन से मुक्त नहीं है । परंतु चिंतन अथवा भाव धारा के बहाने एक स्थल पर कदमताल नहीं है । पात्रों में गति है । विभिन्न स्थितियों , विभिन्न स्थानों और विभिन्न दशाओं में होकर गुरते है । कुछ भी अनूठा नहीं लगता । सामान्य हो चुके शोषण का एक प्रकार है । मन्नूजी ने उसे अपनी विचक्षणता के बल पर एकदम अकल्पनीय और अनूठा बना दिया है ।

यहाँ सब से बड़ी बात है इसका वातावरण । पारिवारिक चरित्रों को लेकर वह जंगल की ओर मुड़ती है । परंतु उसे स्पष्ट हो जाता है कि परिवार से कट कर नारी कहीं की नहीं रह जाती । उधर परिवार की तलाश में भटकता नायक हताश हो कर ऐसे घेरे में ठिकाना लेता है कि सब कहा गया अब अनकहा बन जाता है ।

यह कहानी आधुनिक कहानी के फार्म और टेकनीक से मेल नहीं खाती । लगता है पुरानी और परंपरागत कहानी की शैली में लिखी गई है । यहाँ पूरी तरह संदेश पूर्ण, उपदेशात्मक कहानी रची है । इसमें कथोपकथन भी प्रारंभिक हिंदी कहानी के रूप में है । यह फॉर्म पुरातन लगता है । परंतु वैसा है नहीं । मन्नूजी ने हास्य और व्यंग्य का पुट देकर एकदम अनूठा बना दिया है । यद्यपि कथा के मूल में एक यथार्थ घटना को आधार बनाया है । पर घटना तो कहानी नहीं होती । उसे साहित्यिक रूप देने के लिए अनेक प्रकार से उसका पुन: गठन करना होता है । कुछ पात्रों का समावेश, घटनाओं का पुट और भाषा का विन्यास किया जाता है । मन्नूजी ने इस में वही किया है । इसमें मेलोड्रामाटिक स्थितियों को एक-दो बार व्यंग्यात्मक रूप में सन्निविष्ट किया है ।

प्रेम का उच्चांग रूप किस स्तर, फरेब करना । झूठे आश्वासन और हवाई किले बनाना आदि सारे टोटके शामिल किये गए हैं । यह कहानी जीवन के सत्य को बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत करती हैं । कच्ची उमर की लड़कियाँ अनेक आकाशी सपनों में डूब कर धोखा खा जाती हैं । उधर ऐसी लड़कियों को वाक्जाल में डालने वालों की भी समाज में कमी नहीं । अत: दोनों ओर की स्थिति स्पष्ट कर मन्नूजी ने सतर्क करने में कोई कमी नहीं रखी । जो हो नायक की सारी चालबाजी, धूर्तता और देह सुख के लिए नायिका को होटल-रेस्तोरां में मीठे-मीठे सब्जबाग दिखाता है । अंत में सबका भंडाफोड़ होता है । इस प्रकार का यथार्थ दृश्य देखकर समाज इसे अपने लिए आँख खोलने वाला कथानक माने, यही चाहती हैं । समाज में प्रवेश कर रही लड़कियों के लिए कहानी में बहुत कुछ है । साहित्य(स+हित) का उद्देश्य हित करना है - इस लिहाज से यह कहानी युवा वर्ग के साथ अपनत्व स्थापित कर उसे बेबाक न करने लायक सिद्धांत प्रस्तुत करती हैं । 'टीनएज' के बाद की मानसिकता का गहरा ज्ञान है, अत: उसके झुकाव एवं ठोकर खाने की स्थिति लाकर सावधान करती हैं । यहाँ मन्नूजी ने परोक्ष नहीं, प्रत्यक्ष रूप में वह सारा परिदृश्य रखा है ।

यह कहानी ऊँचे आदर्शों के नाम पर ठगी का धंधा करने वालों पर करारा व्यंग है । परंतु वे चाहती हैं कि युवा पीढ़ी इस उम्र में प्रेम प्रसंग में सोच समझ कर कदम उठाये । भावुकता स्वाभाविक है । उस समय सावधानी पर जोर देकर कहानी में सुन्दर मोड़ प्रस्तुत करती हैं ।

कहानी वातावरण के अनुरूप भाषा पूरी तरह समझने लायक है । उर्दू शब्दों की भरमार है । यह वातावरण को जीवंत और व्यंग को प्रभावी बनाने के लिए भाषा का यह रूप प्रस्तुत किया है । इसी दृष्टि से प्रवाहपूर्ण बनाने जगह-जगह मुहावरे -कहावतों का खुल कर प्रयोग हुआ है । संकेत में प्रेम- प्रसंग को खिलवाड़ बनाने वालों के लिए एक नक्शा रखती है । वहाँ सांकेतिक प्रयोग किया है - नायक सधा हुआ खिलाड़ी है, नायिका निहायत अनाड़ी है । आठ साल तक यह प्रेम पूरी तरह खिलवाड़ था । फिर उसकी बाजी, बंटे ताश के पत्तों का नक्शा भी दिया है । यहाँ पैने व्यंग प्रस्तुत करने उदाहरण दे रहे हैं - ''इन टटपूंजिया पत्तों के सहारे मैं ज्यादा से ज्यादा इतना कर सकती थी - जिन्दगी भर उसकी पूंछ पकड़े रहती और उसे अपनी उपलब्धि समझ-समझ संतोष करती है ।'' नारी जीवन की प्रेम के ढोंग में हो रही उपलब्धि पर कितना तीखा व्यंग है ! अंत में चार निष्कर्ष भी दिये हैं । इनसे व्यंजना को भी अभिधा के रूप में स्पष्ट कर दिया । जो हो मन्नूजी नारी मंगल के लिए हर प्रकार से आज की स्थिति स्पष्ट कर सतर्क करने में पूरी तरह सफल होती हैं । यही इस कहानी की तकनीक की सफलता का रहस्य है ।

बानो

❋ लेखिका परिचय (मंजुल भगत - 1936-1998):

मंजुल भगत का जन्म 1936 में मेरठ में हुआ । दिल्ली में उनकी पढ़ाई हुई ।

कई पुरस्कारों से सम्मानित । इनमें हिंदी अकादेमी , नई दिल्ली और यूपी हिंदी संस्थान का यशपाल पुरस्कार प्रमुख है ।

आपके उन्यास 'टूटा हुआ इन्द्रधनुष और 'तिरछी बौछारें' प्रसिद्ध कृतियाँ है ।

आपकी कहानियों के भारतीय भाषाओं में अनेक अनुवाद छपे हैं । खातुन का अंग्रेजी में अनुवाद छपा है ।

आज के युग में शब्दों के चक्रव्यूह को तोड़कर कर्म तक पहुँचना चाहती हैं । मंजुलजी नैतिक और सौन्दर्य शारीरिक मूल्यों पर प्रश्न चिन्ह लगा रही हैं । उन पात्रों को स्वर देती हैं जिन्हें साहित्य ने अब तक गूंगा बना रखा था । शांत, दृढ़ प्रतिरोधी स्त्री चेतना की प्रतीक हैं ।

❋ कथानक :

कहानी एक टाइपिंग स्कूल में बानो के पहुँच कर जल्दी टाइप कराने पर बात शुरू होती है । लेकिन वहाँ कुछ पहले से और भी महिलायें बैठी हैं । बानो सोफे पर बैठ अपनी कहानी कहने लगती है । लेखिका -श्रोता बन बीच-बीच में प्रश्न करती है ।

उसकी घिसी चप्पलों पर नजर चली जाती है तो बानो सफाई में कहती है । - मैं पहले वैसे न थी । मेरे पति मेरा ध्यान रखते थे । चप्पलें, साड़ी, ड्रेस सब चुन कर लाते । मेरा पूरा खयाल रखते । मैं भी उनका खयाल रखती । मगर उनकी पहलेवाली ने सब बिगाड़ दिया ।

वह एकदम झगड़ालू थी । उसके भाई ने फंसा कर विवाह करा दिया । मन से उसे कभी नहीं चाहा । जैसे तैसे उसके साथ छ: साल तो काट लिये फिर हट गई । अब दुबारा शादी होने लगी तो बड़ी ने अड़चन खड़ी कर दी । पर शौहर ने हिम्मत दिखा -कुछ नहीं , बड़ी वाली से तलाक हो गया और बानो के साथ निकाह हो गया ।

मगर ज्यादा दिन सुख-चैन बानो को नहीं मिला । पांच साल बाद उसका पति बीमार पड़ गया । उसी बीमारी में चल बसा । मरने के बाद बड़ी अपना हक संपत्ति में से मांगने पहुँची । उसके बड़े भाई ने चालाकी से कागजातों वाली बक्सा चोरी करवा लिया । इसके अलावा कीमती सामान वाली संदूक भी उठवा ली । उसके बाद उन्होंने बानो को अपने घर से निकाल दिया। क्या करती ? आखिर शीलाबाजी ने सहारा दिया । बिना खास किराया लिए रहने की इजाजत दे दी । हिम्मत व सांत्वना भी दी । आगे बढ़ने का रास्ता दिखाया । तब वह सिलाई, कसीदा , तुरपाई,टांका आदि सिलाई का काम जानती है । उसके सहारे गुजारा कर लेती है ।

इसी बीच बानो के कागज टाइप होने शुरू हो गये । उसी समय बारिश जोरों से होने लगी और वह टाइप के कागज लेकर चली गई ।

उसके पहले पति का बेटा आया है, उसे घर ले जाने के लिए । यह बानो ही गुलबानो है । वह संतानहीन नहीं । चार-चार बच्चों की माँ है । दूसरे शौहर गुलशेर से कुछ नहीं हुआ ।

दर असल बेटे-पोते सब उसे चाहते हैं । बल्लीमारन मुहल्ले में रहते हैं । वह लौट कर घर में आ जाये । पर बानो उन से छिप रही है । दूसरे पति गुलशेर के मरने के बाद भी वह बच्चों से रुठी रहती है । वह पहले पति के घर नहीं गई । हालांकि बच्चे सब उसे चाहते हैं । पता नहीं क्यों वापस मुड़ कर उस ओर उसने कदम नहीं बढ़ाया ।

लेखिका के मन में बानो के प्रति उत्सुकता भर जाती है । टाइपिंग सेंटर पर अपना पता दे आती है । बानो का बेटा सेंटर पर ढूंढता आता है । वह पता लेकर लेखिका के घर आता है । तब लेखिका उसके बारे में विस्तार से पूछती है ।

बेटा अनवर लौटने की कह कर लेखिका के घर से वापस लौट जाता है ।

बानो का यही गुमनामी में जीना लिखा है ।

बानो के अंदर एक स्वाभिमानी औरत है । एक बार उस घर को छोड़ आयी है, तो लौट कर जाना संभव नहीं । वह अपनी मेहनत मजूरी - सिलाई, तुरपाई, रफ्फू वगैरह से गुजारा कर लेती है । लेकिन उस पर हुए अत्याचार का मुकाबला कर रही है । उसकी बक्सा और कागजात चोरी करवाने पर भी लड़ रही है । मुकदमा कर अपना हक लेना है । इस लड़ाई में अकेली है । बेसहारा है । फिर भी हिम्मत के साथ मुकदमा लड़ रही है । जिस औरत ने तलाक ले लिया, वह पति की सारी जायदाद दबा कर कैसे बैठ जायेगी ? अत: जरूरी कागज बनवा कर लड़ रही है । यही उसकी जिंदादिली का प्रतीक है । स्वाभिमान और हक के प्रति सचेत होने का प्रतीक है । इसके लिए वह उन चारों बेटों के आगे भी छोटी होना नहीं चाहती । हालांकि उनकी अपनी हेयर कटिंग सेलून है । वहाँ भरापूरा परिवार है । मगर

बानों की बातों में कहीं कोई टूटना, कहीं स्खलन नहीं । वह अकेली हक की लड़ाई लड़ रही है । शीलाबाजी के साथ रह रही है, मकान भाड़ा नहीं देना पड़ता, बस यही सहारा है । न बुढ़ापे की फिक्र है और न बच्चों का मोह । बानो धूप-बरसा में अपनी लड़ाई लड़ रही है । यही उसे खुश रखती है ।

लेखिका के मन में बानो के प्रति उत्सुकता हो जाती है । टाइपिंग सेंटर पर अपना पता दे आती है । बानो का बेटा सेंटर पर ढूंढता आता है । वहाँ से पता लेकर लेखिका के घर आता है । लेखिका उसके बेटे से उसके बारे में सब कुछ विस्तार से पूछती है ।

❋ विश्लेषण :

कहानी मुसलमान परिवार की बानो को केंद्र में रख लिखी है । बानो बहुत शांत, सरल और अपने हक के लिए सचेत नारी पात्र है । किसी का हक कभी नहीं चाहती । परंतु अपने हक के लिए कोर्ट -कचहरी के चक्कर लगाती है । सब खो कर भी हक की आस में है । उसके भरोसे न्याय की लड़ाई लड़ रही है । पूरे समर्पण भाव से सब कुछ त्याग किया । बेटों को पढ़ाया, बड़ा किया । बाद में पोतों को लाड़-प्यार दिया । मगर लगा अपने सुख की कमी रह गई । अत: वह सबको छोड़कर गुलशेर के पास आ जाती है ।

वहाँ जब तक रही पूरे स्नेह -आदर के साथ रही । एक बार छोड़ दिया तो फिर पहले वालों का नाम भी नहीं लिया । यही बानो के चरित्र की दृढ़ता दिख जाती है । वह हक के लिए मेहनत कर पूरी हिम्मत से लड़ाई कर रही है । पर वापस लौट कर पिछले परिवार के पास नहीं लौटी । उनसे छिप कर रही । अपना एकाकीपन उसकी बातों में उभरता है, कहीं लाचारी या हार का लक्षण नहीं । कोर्ट -कचहरी में सारे संघर्ष को अंजाम दे रही है । यह कहानी का सशक्त पात्र है ।

कहानी में नायिका बानो और उसके पति का संवाद अथवा बेटे के उद्‌गार ही प्रमुख हैं । इन्हीं में कहानी की भाषा और उसके तेवर मिल जाते हैं ।

मंजुलजी ने इस कहानी में उर्दू का लहजा खूब सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है । कुछ मुहावरे और कहावतें विशेष है :

''हमारे यहाँ पावन तुलसी का पौधा, आपके यहाँ जन्नत का पौधा ।''

''दगा किसी का सगा नहीं होता ।

खुदा आपका सगा लगता है ।''

''लचक तो कच्ची टहनी में ही होती है । ''

इस तरह की रोचक और आकर्षक भाषा के कारण कहानी खूब आकर्षक बन पड़ी है ।

मंजुलजी ने मुसलमानी परिवार की छोटी से छोटी विशेषता को भी सही ढंग से लिया और कहानी में रंग दिया है । लहजा लखनवी नफासत से भरपूर है । इस कहानी में जीवन का प्रवाह है, कहीं रुकता नहीं, कहीं टिका नहीं । अंत में भी मानो कोई झरना दूर बहता चला जा कर आँखों में नमी घोल उनसे दूर हो जाता है । यह कहानी जैसे अचानक शुरू होती है, वैसे ही बिना घटना या हादसे के बहुत शांत -सरल लहजे में गायब हो जाती है । समाज से संघर्ष का रूप अलग है, हथियार भिन्न है और अन्दाज भी भिन्न है ।

इस कहानी में नारी का स्वाभिमानी रूप अद्‌भुत शांत भाव से उभरा है । बानो के रूप में एक अनोखा पात्र है जो जिंदा है, संघर्ष करता है, वह अपने किसी स्वार्थ के लिए नहीं टकराता परंतु अन्याय के लिए लड़ने वाला पात्र है ।

सारी सुख-सुविधाओं में जीने वाली बानो टांका-तुरपाई कर के शांत भाव से अपना हक लेने के लिए संघर्ष कर रही है । ऐसा पात्र 'टाइप' नहीं होता । अपना व्यक्तित्व गरीबी में भी स्पष्ट करता है ।

इसलिए वे कहती हैं जीना, महसूस करना और सोचने का क्रम चलता रहता है । इस कहानी में जीना और महसूस करना जारी है ।

मेरे देश की मिट्टी : अहा

❋ लेखिका परिचय (मृदुला गर्ग):

मृदुलागर्ग का जन्म 1938 में कोलकाता में पराधीन भारत में हुआ । परंतु उच्च शिक्षा प्राप्त की । फिर दिल्ली विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र की अध्यापिका बनी । यहीं जीवन का व्यापक अनुभव प्राप्त हुआ । मृदुलाजी ने 1970 में पहली कहानी लिखी ।

धीरे-धीरे लेखन महत्व पूर्ण बन जाता है । और पीड़ा को लेकर उपन्यास रचित हुए । सृजन में कहानी के अलावा आपने नाटक, उपन्यास भी लिखे हैं । इसमें बहुचर्चित 'चित्तकोबरा' अपने बोल्ड चित्रण के कारण चर्चा में रहा । 'उसके हिस्से की धूप' उपन्यास में विवाह बंधन में जब सड़ांध आने लगती है तो उसमें प्रेम कहीं खो जाता है । वह पूर्व प्रेमी जिसमें खोती है । वहाँ भी देह का ज्वार भाटा शांत होने के बाद निराशा हाथ लगती है । तब नायिका अपना परिचय लेखनी में पाती है । लेखन में उसे आत्म संतोष मिलता है । मृदुलाजी का यह भाव आगे भी शारीरिक रिश्तों के थोथापन की घोषणा करता है । अत: मृदुलाजी ने कहा - प्रेम अपने मूल रूप में प्लाटो (अशारीरिक) होता है, उसकी परमगति प्रेमी से एकात्म होने में है, एक शरीर होने में नहीं ।

पर मृदुला की नारी पात्र में माँ, बेटी, बहन, पत्नी, प्रेम आदि बंधनों में बंध कर भी खुद की एक पहचान चाहती है । इसे 'आइडेंटीटी' कहते हैं । वह एक नारी है और दूसरों से हट कर स्वतंत्र रूप से अपने व्यक्तित्व की तलाश होती है । नारी का यह रूप पूर्ण स्वतंत्रता की मांग करता है । मृदुला जी के पात्रों में यही कामना सर्वाधिक तीव्र होती है । सारा संघर्ष इसी पर चलता है ।

❋ कथानक :

लल्ली अपनी दादी के साथ गांव में रहती है । उसके परिवार को गांववालों ने 'लूटा' । घर से बेदखल किया तो चमार टोला के पास वाली अपनी बंजर जमीं पर झोंपड़ी बना कर रही । बूढ़ी दादी ने मरने से पहले वह जगह गुड़गांव के रिश्तेदार को बेच दी । बुढ़िया के मरने के बाद उन्होंने आकर तुरंत कब्जा कर लिया । लल्ली भी गांव छोड़ गुड़गांव चली गई । वहाँ स्कूल जाने लगी । इंटर पास कर ली । तभी एक पैतालीस साल के आदमी की पत्नी मर गई । बारह -चौदह साल के दो बच्चे छोड़ गई । घर वालों ने जवान हो रही लल्ली के साथ उसका रिश्ता कर दिया । वह जीजा हट्टाकट्टा पुलिसिया

हवलदार था । मंगनी कर दी । पर उसका तबादला हो गया । पुलिसवालों के क्रूरतापूर्ण कारनामे सुन-सुन घबरा जाती । वह उसीमें बेहोश होने लगती है । मगर जीजा को लगा यह जवान हो गई है, विवाह कर बेहोशी का इलाज कर देगा । मगर अपने पति की क्रूरता, निर्दयता से डरी, सहमी और घबराई हुई है ।

उसने देखा सामने किराये में रहने वाला दुबला युवक उसके चढ़ते यौवन पर निगाह रखता है । बस उसके करीब हो गई । एक दिन उसके साथ भाग कर दिल्ली पहुँच गई । वह 'डेढ़पसली' मुसलमान था । उसे लेकर मौलवी के पास पहुँचा । कलमा पढ़ा कर उसका 'लैला' नाम रखा । फिर निकाह कर लिया ।

कुछ दिन बाद अपने पति के गांव खेड़ी आयी तो देखा वहाँ उसकी पहली बीबी है । जो टी बी की मरीज है । उसके साल भर का बच्चा है । लैला दिल्ली आ गई । लेकिन फिर गांव खेड़ी आना पड़ा क्योंकि उसकी पहली बीबी की मौत हो गई । वहाँ छोटा बच्चा था । लैला ने दादी के पास रहने का मन बनाया । सास-ससुर व बेटे की सेवा करने गांव में रह गई । पति अकेला वापस दिल्ली लौटा ।

गांव में लैला ने सेवा कर सबका मन मोह लिया । तभी फरीदाबाद गांव का चमारटोले का एक आदमी एमएलए चुन लिया गया जो दादी को जानता था । वह आरक्षित कोटे में आ गया । वह खेड़ी आया था । लैला का पढ़ा लिखा होना, उमर सब देख उसे गांव में 'साथिन' बना दिया गया । गांव भर की समस्यायें उसके सामने थी । पर साथिन के जिम्मे तीन काम : गांव के बच्चों को टीका अभियान में जुटाना, आंगनबाड़ी में चना बांटना, परिवार नियोजन के लिए गांव की औरतों को समझा कर वहाँ लाना ।

तीन से छ: साल वाले बच्चों को आंगनबाड़ी में रहना जरुरी था । चार घंटे रहें । एकदफा सेहतमंद खुराक मिलती । बाकी वक्त के लिए खेल-खिलौने । उस खाद्य में ज्यादातर को सरकारी अमला साफ कर लेते । कुछ साचिन के हिस्से आता । अत: लैला का बेटा औरों से बेहतर पल -बढ़ रहा ।

गांव में 'सहेली' गर्भनिरोधक गोलियां आती, बंटें या नहीं, बंटती हुई दिखाई जाती । लैला की हिम्मत बढ़ती गई । इधर उसके पति ने शहर में एक बीबी और रख ली थी । वह लैला के पास गांव खेड़ी महीने दो महीने में आता । पर पैसा कुछ न देता । बस, वह भी कुछ बिना बंटी 'सहेली' गोलियां दे उसे बिदा कर देती ।

गांव में हड्डियों का कारखाना खुलने से गंध की बीमारी बढ़ने लगी । लल्ली ने फरजान मियां को कहा और मीटिंग बुलाई । विरोध किया । प्रस्ताव पर्यावरण और प्रदूषण से बचाव के लिए पास हो गया । केस की बात उठी । एक जवान ने नसबंदी के जरिये पैसे जमा कराने की तरकीब बताई ।

खानापूर्ति कर रुपये जमा कराये । वह कारखाने का चौकीदार है जो स्टे आर्डर होने पर बंद कारखाने से हेराफेरी कर मदद करेगा ।

इधर खबर फैली कि लैला ने नसबंदी करा ली है । अत: पति गांव आया तो उसकी खूब पिटाई की गई । गुस्से में उस डेढ़ पसली ने तलाक भी दे दिया । अत: वह चौकीदार से विवाह करने को राजी हुई । विवाह कर बच्चा पैदा किया । अगले साल विश्वबैंक के अमेरीकी लोग खेड़ी गांव आकर प्रदूषण देखकर खुश । वह जवान चर्चा में आ गया । हर तरफ देश भर मं बांके जवान की प्रदूषण के लिए की गई मेहनत की खूब प्रशंसा हुई । अब संभावना यह है कि आगामी चुनावों में खेड़ी गांव से वह जवान एमएलए का चुनाव जरूर जीतेगी ।

❋ विश्लेषण :

कहानी गांव की आजादी के बाद की है । उद्योग के नाम पर प्रदूषण भरने लगा । नारी मुक्ति के नाम पर उच्छृंखलता और भ्रष्टाचार पनपने लगा । सारे नियम सारी परंपरा हास्यास्पद बन जाती है । नारी पर अत्याचार बढ़ने ते वह भी फिर अपने लिए राह निकाल लेती है । इसमें हिंदू-मुसलमान , मर्द-औरत, बच्चे-बूढ़े की बात महत्वहीन बन जाती है । लल्ली से लैला बनना और फिर गांव में उसी प्रकार बेलगाम होना, एक नई परंपरा बन रही है । जिसमें नारी का प्रक्रिया में विद्रोही बनना और पुरुष का जननायक बन जाना व्यंगभरा यथार्थ है । सरकारी योजनाओं का जो हाल हो रहा है, उस पर चीखी चोट है । न्यायपालिका और विधायिका दोनों के ढहते खंडहर देखे जा सकते हैं । इसीलिए स्पष्ट है कि कहानी का समूचा कथानक कल्पना पर बना पर संपूर्ण यथार्थ पर आधारित है । खेरी, लैला, चौकीदार, एमएलए आदि पात्र नामहीन हैं पर भारत के किसी क्षेत्र में मिल जाते हैं । मृदुलाजी ने सब पर गहरी चोट की है ।

गांव में जन्म लेती है लल्ली । पहले खूब छोटी थी तो अपने परिवार वालों के अन्याय का शिकार होती है । बनियों के घर पैदा हुई घर से ही वे बेदखल कर देते हैं । दादी लेकर गांव के छोर पर पड़ी बंजर जमीन में शरण लेती हैं । दादी के मरते ही वह गांव छूट जाता है । गुड़गांव आ गई । सात साल में स्कूल जाने लगी पढ़-लिख कर बारहवीं पास कर लेती है । बीस साल की जवान लड़की ! ताऊ की विवाहित बेटी का देहांत हो गया । अत: तुरत उसे वहाँ पर बिठा दिया । वह पुलिस में हवलदार था । लल्ली इस तरह भाग्य की मारी दूसरे माहौल में पहुँच जाती है । अब तक जीवन संघर्ष में यों उलझी कि 'जवानी' पर कभी सोचने का समय ही नहीं पाया । बाहर का वातावरण कभी देखने का अवसर न था । इन जीजा जीजी के बीच रही । सीमित अनुभव के कारण विवाह के बारे में कोई धारणा न होने से चुपचाप सह लेती । केवल डर था कि यह हट्टा कट्टा पुलिसिया मर्द उससे कैसा व्यवहार

करेगा ? लेकिन पुलिसवाली बेदर्दी और खौफनाक बातों को सुन-सुन वह डर गई । सहम जाती है । घबरा जाती है । जीवन में एकदम नया अनुभव था । ''मार-मार कर खाल उधेड़ने वाला'' पति वह सह न सकेगी । अत: सोच कर भय से बेहोश हो जाती । पर पति ने इसे उम्र की बीमारी समझ कर कहा - मैं ठीक कर दूंगा । यह एक हिस्टीरिया है । कोई उसका डर समझ नहीं पाया । कोई उसके इस एकाकी मन के भाव को साझी करने वाला न था । पति तो पुलिसवाला सवाल में अपनी डींग हांकता रहता । लल्ली उससे घबरा उठती । जीवन के इस कोमल मोड़ पर सिर्फ दहशत ही दहशत देखकर घबरा उठती है । इसी दौरान जब उसने घर के सामने वाले युवक को आकर्षित होते देखा, वह आँख मूंद उसकी हो जाती है । वह ऐसे हालात में पहुँच चुकी है कि धर्म नहीं देखती, देह नहीं देखती । हर हाल में उस घर, उस वातावरण से निकल आना चाहती है । यह जीवन के लिए छटपटाती स्त्री का अनन्योपाय होकर लिया निर्णय है । भले ही उसका नाम बदले, धर्म, शहर बदले, इस खौफ से तो छूटे जो चमड़ी उधेड़ने के सिवा कोई बात ही नहीं जानता !

यह व्यक्ति दुबला-पतला मुसलमान है । उसे विवाह के कुछ दिन बाद अपने गांव खेड़ी ले जाता है । दूसरी बीबी बीमारी में गुजर जाती है । लैला वहीं दादी और पहली वाली के बच्चे की सेवा करने रह जाती है । वह समाज के बीच आ गई । सामाजिक समस्याओं का सामना करती है । अपने जिम्मे दिये काम में भी माहिर है । इस प्रकार सारे गांव में धाक और अपनी इज्जत बनाती है । घर के मोरचे पर पति का सामना भी चतुराई से करती है । 'सहेली' की कुछ बची गोलियां बेचने उसे दे देती है - उसे संतुष्ट कर विदा करती है । उसकी हिम्मत के बारे में कहती है - ''लैला की हिम्मत खुदा के खौफ को धता बतला चुकी है ।'' एम एल ए भी उसके कार्य से चकित है । मगर गांव में कारखाने खुलने से हुई बीमारियों के कारण वह भी उसमें सक्रिय हो उठती है । राजनैतिक दांवपेंच समझ रही है । इसी चाल में वह भी शामिल हो कर आर्थिक मोर्चे पर मददगार बनती है । गांववाले उसके व्यवहार से खुश । इज्जत बढ़ जाती है । वह मर्दों की मीटिंग में औरत बोलने खड़ी होती है ! 'परिवार नियोजन' की स्कीम के सहारे अपना सहयोग देने की बात कहती है । बांका जवान भी, जो फेक्टरी में चौकीदार था, राजी हो गया । लैला के पति ने जब जाना कि लैला ने नसबंदी कराई है तो पिटाई कर दी । गुस्से में तलाक दे दी । लैला राजी हो गई । अब उस चौकीदार संग रह बच्चा पैदा करने की शर्त पूरी कर दी । चौकीदार से शादी हो गई । प्रदूषण सुधार और पर्यावरण रक्षा के नाम पर वह गांव में प्रसिद्ध हो गया । राजनीति में वह अब अगले चुनावों में एम एल ए की योग्यतावाला जवान बन चुका था ।

मृदुलाजी ने इस कहानी में नारी जीवन का बहुत बड़ा कैनवास लिया है । कितनी दूर तक जाती है । अंत में अपने पति के साथ सहयोग कर उसे राजनीतिक सीढ़ियाँ चढ़ने लायक बना दिया । वह दबाव, शोषण और मारपीट सहने के बजाय वहाँ से बाहर निकलना पसंद किया । अपना जीवन रास्ते

पर चलता देख वह राजनीति से भी परहेज नहीं कर रही । अपने पति के प्रति भी ईमानदार है । बच्चे की उपेक्षा भी नहीं करती । उसका पालन-पोषण कर रही है । पर शुरू से अंत तक अपनी अस्मिता, अपने स्वाभिमान पर सदा सचेत रही है । वहाँ वह समझौता नहीं करती । यह उसके सशक्त होने का सबसे बड़ा गुण है ।

लेखिका भारतीय समाज के नये उभरते इस रूप पर गहरे व्यंग करती हैं । इसमें कोई भी अच्छा काम गलत ढंग से ही संभव हो पा रहा है । सही रास्ते से नहीं । इन योजनाओं में राजनीति, अर्थनीति एवं नये-नये संकल्प सबका ढहना दिखाया है । इइमें चक्कर खाती नारी है । परिवार, समाज, राजनीति, नौकरी हर क्षेत्र में नारी का भविष्य अपने बल-बूते पर ही सुरक्षित नजर आता है ।

यह कहानी उर्दू शब्दावली से भरपूर है । मुसलमानी पात्र होते हुए एवं परंपरा के स्रोत मुसलमानी हैं । वातावरण भारतीय गांव और शहर का है । खेड़ा से राष्ट्र की राजधानी तक चौकीदार, ग्राम साथिन से मंत्री , और एमएलए तक को प्रस्तुत किया गया है । परंतु लेखिका ने व्यंग को इतना पैना रखा है कि यथार्थ की तीखी चुभन तिलमिला देती है । बस गांव की लड़किया इतनी मुखर नहीं हुई । अगर बढ़ गई तो लैला ही बनती जायेंगी, इसमें शक नहीं है ।

इस प्रकार मृदुलाजी ने शीर्षक से ही कहानी की दिशा तय कर दी है । ' मेरे देश की मिट्टी, अहा' यहाँ पचास बरस के देश में आ रहे बदलाव पर प्रकाश डाला गया है । अंत में भविष्य की भी सूचना दे दी गई है । देश को किन हाथों में सौंप रहे हैं, यह बहुत स्पष्ट है । मृदुलाजी की कहानी उस संबंध में कोई संदेह नहीं छोड़ती । कहानी में ऊपर से देखने पर कुछ मोड़ अचानक आ रहे हैं । चमत्कार पूर्ण ढंग से बदलाव दिखाये हैं । पर वह सब कहानी के शिल्प का अभिन्न अंग है । इस अंतर्धारा के माध्यम से लेखिका ने पैनापन उत्पन्न किया है ।

आज की नारी जागरुक हो चुकी है । अपनी अस्मिता को सबसे महत्वपूर्ण मानती है । स्त्री विमर्श को व्यापक कैनवास -पश्चिमी और भारतीय परिदृश्य में उभारा है । वह समझ चुकी है कि उसकी अस्मिता पर हर जगह (हिंदू या मुसलमान) संकट है । नौकरी हो या घर की चारदीवारी । मार खाना नियति है । तुष्टीकरण एक रास्ता है । अंतिम उपाय नहीं । पति से तलाक भी समाधान नहीं बन पाता है । अंत मश्रें उसे स्वयं इसका रास्ता साहस के साथ निकालना है । अपने संघर्ष में खुद बढ़ना है ।

छोटे खिलाड़ी

✻ लेखिका परिचय (ममता कालिया):

ममता कालिया सन् 1940 में मथुरा में जन्मी । आपने शुरू से ही कथानक की ओर कदम बढ़ाये । पढ़ाई अंग्रेजी में एमए तक । बाद में आपका विवाह रवीन्द्र कालिया जैसे प्रसिद्ध कथाकार से हुआ । ज्यादातर समय स्वतंत्र लेखन से ही जुड़ा रहा । संप्रति आप नई दिल्ली में रहती हैं ।

उपन्यास में 'बेघर', 'एक पत्नी के नोट्स', 'दौड़', और 'पच्चीस साल की लड़की' प्रसिद्ध हैं । कहानी संग्रह में 'छुटकारा', 'एक अदद औरत', 'मुखौटा' और 'निर्मोही' प्रसिद्ध हैं ।

ममताजी के दो एकांकी संग्रह और कुछ अनुवाद भी प्रकाशित हैं ।

आपको उत्तर प्रदेश सरकार से यशपाल सम्मान, यूपी हिंदी संस्थान से महादेवी वर्मा अनुशंसा सम्मान, फिर साहित्य भूषण सम्मान आदि अनेक महत्वपूर्ण सम्मान मिले हैं ।

✻ कथानक :

छठा विश्व हिंदी सम्मेलन पारामारिबो(सूरीनाम) में हुआ । लेखिका अर्पणा को निमंत्रण मिला है । पर वहाँ जाने से पहले यलोफीवर प्रतिरोधक का टीका लेना जरूरी है । अत: तीन उम्मीदवार साथ दिल्ली में डाक्टर के पास पहुँचते हैं । वह पांच लोगों से कम को एक साथ टीका दे नहीं सकता । अत: दो दिन रुकने को कहता है । वहाँ रुके रहना ज्यादा महंगा होने के कारण ठहरना संभव नहीं ।

खैर, चपरासी दो और की फीस भरवा लेता है । इस तरह पांच हो गए । डाक्टर टीका लगा देता है । लौट कर वे इलाहाबाद घर आ जाते हैं । अपर्णा को आयोजकों से पत्र मिला कि वे दो का खर्च नहीं उठा सकते । अत: एक प्रयोजक ढूंढ लें ।

अपर्णा सूरीनाम नहीं गई । वह 'छोटी खिलाड़ी' है । ऐसे लेखकों को प्रायोजक कहाँ से मिलते ! इस बीच बताया कि कल कालेज में अंग्रेजी क्लास में अध्यापक पढ़ाते समय कुत्ता आ गया । पढ़ाते समय अंग्रेजी में बोले 'गो आउट' ! कुत्ता बाहर नहीं गया । एक लड़के ने कुत्ते पर रजिस्टर फेंका तो भाग गया ! एक अध्यापक ने मजाक के लहजे में तभी कह दिया - ''कुत्ते अंग्रेजी नहीं समझते ।'' इस बात का हिंदी लड़कों ने अर्थ लगाया - हिंदी वालों को कुत्ता कहा है । अत: कालेज में स्ट्राइक हो गई ।

इम्तिहानों का डर । अत: समझा कर शांत किया गया ।

खैर, महिला को एक मित्र ने कहा - प्रकाशक को कहते । वह प्रायोजक ढूंढ देता । मगर लगा कि हम छोटे खिलाड़ी हैं । हमें प्रायोजक नहीं मिलते । क्रिकेट वाले या फिल्मी सितारों को मिल जाते हैं ।

सूरीनाम इतने लोग गए । उन्हें प्रायोजक कैसे मिले ? वे वहाँ कैसे गए यह दूसरी बात । पर बड़े खिलाड़ी बड़े हैं ।

❋ विश्लेषण :

इस संक्षिप्त कहानी में कुछ सच कुछ कल्पना का मिश्रण किया है । विश्व सम्मेलन में भाग लेने के बहाने लेखिका ने अपने खट्टे-मीठे अनुभव रखे हैं ।

परंतु उनका जोर वस्तुवाद और बजारवाद पर है । मनुष्य मनुष्य नहीं रह जाता, वह एक वस्तु बन जाता है । उसके उपभोग का अभियान चलता है । प्रायोजित हो तभी संभव है । वरना उपेक्षित रह कर बाजार के लिए बेकार वस्तु बन जाता है । लेखिका इस यथार्थ से परिचित है । अत: आज के जीवन में अपना वजूद बचाये रखने के महत्व को समझ लेती है ।

लेखिका सूरीनाम न जा पाने के कारण कुछ बौखला जाती हैं अत: कहीं -कहीं तीखे उद्‌गार मिलते हैं । यह प्रायोजक न मिलने की समस्या तो व्यापक स्तर पर है । व्यवसाय बढ़ाने हेतु विज्ञापन या प्रायोजन देते हैं । अत: इस मुद्दे पर इतनी तीखी प्रतिक्रिया ! डाक्टर के व्यवहार, चपरासी के द्वारा अधिक पैसा मांगना आदि बातों में बहुत कुछ कड़वाहट है, यह बात समझ में आ जाती है । सामाजिक स्थिति स्पष्ट कर रही है ! हताशा और निराशा दोनों ही कड़वाहटों से उपजे विषाद में कहानी अपना विशेष तेवर लेती है ।

कहानी संक्षिप्त होने के कारण विस्तृत व्यौरे के लिए जगह नहीं रहती । सब को संकेत में ही समेटती हैं । परंतु इसकी भाषा का व्यंग काफी धारदार है । उर्दू का लहजा छोड़ने पर भी मूलत: दिल्ली के आसपास की सामान्य हिंदी है ।

कहानी में गति है परंतु घटनाएँ ज्यादा नहीं हैं । उसी तरह दर्द, घुटन, कटुता इस कहानी में उभर कर आती है ।

इसमें बहुत सीमित पात्र हैं । संवाद संक्षिप्त एवं भाषा इनकी खूब सरल एवं सहज है । नियम - कानून पालन की बात तीखे व्यंग के माध्यम से रखी गई है ।

ममताजी ने कहानी का मूल कथानक दक्षिण अमेरिका स्थित पारामारिबो में हुए सातवें विश्वहिंदी

सम्मेलन के लिए मिले निमंत्रण और उससे हुई कठिनाइयों से चुना है । सूरीनाम यलोफीवर प्रभावित क्षेत्रों में आता है । जैसे इधर अफ्रीका के कुछ देश 'इबोला' के घेरे में हैं । वहाँ की यात्रा से पहले कुछ सावधानी बरतनी पड़ती है । वैसे सूरीनाम भी विशेष सूची में है । वहाँ की जलवायु यलोफीवर के अनुकूल पड़ती है । यलोफीवर का टीका लेकर सात दिन रहें तब उसकी इम्यूनिटी शरीर में आती है । अत: यात्रा से पहले कम से कम सात दिन पहले यह टीका लेना जरूरी है । यह टीका सब जगह उपलब्ध भी नहीं होता । सिर्फ दिल्ली, चेन्नई, आदि खास महानगरों में ही मिलता है । काफी महंगा टीका समय -समय पर ही उपलब्ध होता है । अत: निर्धारित स्थान पर बहुत पहले संपर्क कर उसके लिए अपायंटमेंट लेना जरूरी होता है । इस कारण इन देशों की अल्प सूचना पर यात्रा करने वालों को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । अगर सात दिन की कम अवधि में टीका लगा कर यात्रा करनी पड़े तो यलोफीवर होने का खतरा बना रहता है । अत: हर यात्री पूरी सावधानी बरतता है । इस बीमारी का बहुत कठिन इलाज है । इन सारी दिक्कतों के कारण लेखिका ने टीका लगाने की समस्या और उससे जुड़ी कठिनाइयों को कहानी का विषय बनाया है ।

परंतु मूल विषय 'छोटे खिलाड़ी' है । आज के समाज में 'छोटे' और 'बड़े' के मापदंड भिन्न हो गए हैं । बड़ा (अर्थात् महान) किसे कहेंगे ? वही महत्व के कारण हर जगह वरीयता पाता है । इसमें प्रतीक तौर पर किसी फिल्मी अभिनेता, खिलाड़ी को लिया है । उनके लिए प्रायोजकों की भीड़ लग जाती है । क्योंकि लोग उनके पीछे पागल हैं । प्रचार-प्रसार में उनके भाव ज्यादा हैं । उनके सामने लेखक एक मामूली, पिद्दी जैसे लगता है । उसकी खास अहमियत नहीं होती । यह अपना तुलनात्मक आकलन इस कहानी का मुख्य मुद्दा है । यही यह बात उजागर हो रही है कि आजादी के बाद भारत में मूल्य बदल रहे हैं । हमारी प्राथमिकतायें परंपरा से हट रही हैं । पुराने जमाने की बातें आज गैरजरूरी हो चुकी हैं । उसमें लेखक अपने को हीनमन्य क्यों माने ? ममताजी ने यहाँ पर लेखकीय गौरव और अस्मिता का प्रश्न उठाया है । उसके बेकग्राउंड में है देश में पनपा भ्रष्टाचार, घूसघोरी एवं बदनीयत । सही ढंग से सहज में कोई काम होना संभव नहीं रहा । लोग जल्दी काम करनवाने की हड़बोंग में घूस का सहारा लेते हैं । अत: कर्मचारी वर्ग का साहस बढ़ता है । उनका नैतिक स्तर गिर जाता है । तीसरे शिक्षा का स्तर भी गिर रहा । यहाँ पढ़ाई प्रमुख नहीं रही छात्रों के प्रमुख विषय कुछ नहीं रहे ।

इस प्रकार कहानी अत्यंत रोचक होते हुए भी मूल्यों के पतन पर व्यंग से बढ़ कर चिंतन पर प्रभाव डालती है । यह कहानी यथार्थ से अधिक वास्तव पर पड़े दबावों और धाराओं पर प्रकाश डाला है ।

आदमकद

❋ लेखिका परिचय (सूर्यबाला):

सूर्यबाला का जन्म 1944 में वाराणसी में हुआ । पढ़ाई-लिखाई भी वहीं की । पीएच डी तक करने के बाद आप स्वतंत्र लेखन में चली गई ।

अत्यंत बेबाकी से नारी जीवन पर लिखा । परंतु सूर्यबाला जी का हास्य -व्यंग से परिपूर्ण कथा संसार उन्हें विशेष प्रतिष्ठा देने में सहायक हुआ है ।

इनके उपन्यासों में 'मेरे संधि पत्र', 'सुबह के इंतजार तक' प्रसिद्ध हैं । पर 'अग्निपंखी' और 'दीक्षांत' से काफी चर्चा में आ सकी है ।

कहानी संकलनों में एक इन्द्रधनुष : जुबेना के नाम, मानुष गंध और पांच लम्बी कहानिर्यां विशेष चर्चित हुई हैं ।

❋ कथानक :

नायिका एकदम काली है । पर देह एकदम ठोस । नारी रूप के लिए ठोस कलाइयों में दो-चार मैलखायी चूड़ियां थी । नाक में सोने की नकाशीदार बेसर । देह पर साड़ी किनारेदार, साड़ी से हर समय सिर ढांपे रहती ।

काम खूब मन लगा करती है । गंडेरियाँ बनाने में उस्ताद । घर में कहते - बेसरवाली मामी । छोटे -बड़े सब कहते ।

कामता मामा शहर की सारी आलसी आदतें लगा चुका है । एक तो वह खैनी-सुरती खाता रहता है । दूसरे मेहनत वाला कोई काम उससे नहीं होता । अत: घरवाली पर सब डाल देता है । थोड़ा-सा पढ़ा लिखा है । अत: वह हमेशा सस्ते उपन्यास ले आता है । पुराने जमाने के बेताल-पचीसी पढ़ता रहता है । इस प्रकार वह बेकार समय काटता रहता । स्वास्थ्य भी गिरता गया । उस खास्ता हालत में जिन्दा कैसे रहता ? न कोई समाज, न कोई परिचित । वह जब मरा तो चार लोग उठानेवाले भी नहीं मिलते । बेसरवाली मामी उस मुर्दे को तांगे में लाद कर लाजवंती के घर ले जाती है । साथ सिर्फ उसका छ: साल का बच्चा है । साथ में गांव के दो लोगों को लायी है । मगर हिम्मत यह है कि मर्द के मरने पर

रोना-पीटना या हताश होना जैसा कोई दृश्य नहीं । यह है उसका कद्दावर रूप । कामना है अपने बच्चे को पालपोस कर बड़ा करना । इस जिन्दगी का वह पूरी हिम्मत से सामना करती है ।

मामा घर में पड़े रहते । कुछ काम नहीं । आलसी पूरे । इस तरह दोनों का विवाह याने पलड़ा बराबर हो गया । पर एक को शरीर व रंग ईश्वर दत्त था दूसरा खुद आदत से लाचार ।

जब 'वह' पेट से होती है, तब गांव चली आती है । साथ में पति । बच्चा होता है । वह मेहनत कर खेत में काम करती है । छान पर लतर लहराती । पर पति सोया रहता, खेत चोर काट ले गए । लतर उड़ गई । रहट खरीदने का नाम लेकर उसने उसकी बेसर बेच दी । मगर हुआ कुछ नहीं । फालतू किताबें और गांजा । उसीमें पति मर जाता है । वह बेटे को लेकर शहर लाजवंती तक आती है । मर्द को अकेले फूंक देती है । लाजवंती के पास रहेगी अब । वह मिहनत कर गांव का घर बसायेगी और लाजवंती के यहाँ चूल्हे-चौके का काम करेगी । बेटे को बड़ा करेगी । वह कह देती है -'' किसी की चहेती लजीली औरत बन कर दिख पाना मेरे बस में नहीं था । यह काया सब से बड़ी बाधा थी मेरे लिए । लेकिन मां बन कर दिखा पाना तो मेरे हाथ में है न ! मां - बेटे के बीच कभी बदसूरती बाधा नहीं बनती । यह बहुत बड़ा फर्क है मर्द और औरत में- इस तरह वहाँ तन कर खड़ी होती है ।

✻ विश्लेषण :

यह कहानी बदसूरत औरत और आलसी पति की है । एक तरफ वह हार कर गांजे में डूब जाता है । दूसरी छुटकारा पाने पर भी बेटे को लेकर जीवन संग्राम में खड़ी होती है । कहीं रोना -धोना- लिजलिजापन नहीं । जीवन के यथार्थ से संघर्ष करने खड़ी है । पति सहयोग न करे तो वह क्या कर सकती है ? हार नहीं मानती, बेटे के लिए फिर से संघर्ष करने खड़ी होती है । बेटे को सही राह दिखाने लाजवंती के पास छोड़ती है । वह किसी से सहानुभूति नहीं चाहती । स्वाभिमानमयी एक ठोस नारी है । पति के मरने पर भी रोना -पीटना नहीं । अकेली इक्के में डाल कर ले जाकर पति की अंतिम क्रिया कर देती है । उसे फूंक आने के बाद फिर नई जिन्दगी नये सिरे से जीने को कमर कसती है । बेटा अपना है । अत: वह उसका आस-भरोसा है । लाजवंती के घर काम भी करेगी । अपनी झोंपड़ी सजा कर जीवन जी लेगी । उससे बेटे को पाल लेगी । यह उसके अंदर जीवटवाली औरत है ।

सूर्यबालाजी हास्य-व्यंग के कथानकों के लिए प्रसिद्ध हैं । परंतु यहाँ एक ठोस औरत को खड़ी कर सकी हैं । यह औरत हमारी धारणावाली कमजोर, रोनेवाली या दूसरे के सहारे पर विवश लता जैसी नहीं । इसमें मां बन कर अपनी मजबूती दिखाने की हिम्मत भी है । एक दृढ़ इरादे की कद्दावर औरत प्रस्तुत की है ।

कहानी में पात्र एकदम सीमित हैं । पूरी तरह संकेतभरी है । औरत का यह चरित्र दुर्लभ होता है । पचास बरस बाद के भारत की स्त्री देह बेच कर नहीं जी सकती । वह अक्षम और आलसी पति के सहारे जीने वाली लतर भी नहीं है । ठोस साल के वृक्ष की तरह तनी है । मजबूत और स्पष्ट है । इसीलिए इसका नाम आदमकद रखा गया है । इसमें न सेक्स को लेकर दुर्बलता है । ना आर्थिक तंगी से रीढ़ झुकी है और न ही रूपहीनता की कोई ग्रंथि उसे निगल सकी । यह कहानी के सार्थक नाम को दर्शाती है । मनुष्य- पूर्ण रूप में मानव है । उसमें मां का हृदय है । कामकाज की हिम्मत है । पति बिना भी जीवन जी पाती है । अत: पूरा मनुष्य बनाया है । यही उसके नाम की सार्थकता है । नारी के नये सशक्त रूप के दर्शन होते हैं ।

सूर्यबालाजी की कहानियां अपने कथ्य में अनूठी होती हैं । नारी चेतना का परंपरागत सेक्स और अर्थ की चिंता में डूबा व्यक्तित्व लगभग गायब है । जीवन में नये मूल्य, नई चेतना और नई आकांक्षा इससे हट कर है । यह एक पक्की और बजबूत औरत को प्रस्तुत कर रही हैं । अगर खुद देह से बदरंग है तो मर्द भी देह से बदचलन हो सकता है । मगर बदरंग में मर्दानगी भरपूर है । देह सही राह पर न हो तो गांजा पीकर मरने को बाध्य है । सूर्यबालाजी का यह भारतीय नारी के प्रति स्वस्थ ही नहीं सशक्त दृष्टिकोण उसे भीड़ से अलग खड़ी कर देता है ।

यह औरत ठोस, हिम्मत और रीढ़ वाली है । न इसे अपना कुरूप होना निराश करता है, न वह आलसी पति । उसका अकेला हो जाना उसे अंदर से और भी मजबूत करता है । वह औरत होने से अपने इरादे को दृढ़ कर लेती है । संतान में भविष्य देखती है । जमीन पर खड़ी, नजरें आकाश की ओर । पति का न होना उसके साहस में कभी कमी नहीं आती । वह मौन प्रतिवाद करती है । वह सारी दुनिया के विरुद्ध तन कर खड़ी होती है । उसमें नारी होने से उत्पन्न हीन भाव तिल भर भी नहीं है । यह कहानी की लीक से हट कर है । नारी एकदम बोल्ड होकर सामने आती है । सब में बड़ी बात है कि वह यह खूब जानती है कि अंगों का सोष्ठव उसे हीनग्रंथि ग्रसित कर देगा । पर वह स्वस्थ मन बल पर संघर्ष के लिए दृढ़ता से प्रतिरोध करती है । ऐसी दृढ़ मनोबल नारी साहित्य में दुर्लभ है जो मृत पति को बांध इक्के में डाल ले जाती है । बेटे को सुरक्षित जगह छोड़ कर पति का दाह कर्म कर आती है । यहाँ उसके अन्दर कठोरता नहीं है, दृढ़ता है । अपने स्वाभिमान और मातृत्व के लिए कितनी मजबूत दृढ़तावाली हो सकती है, यह स्पष्ट है ।

सूर्यबालाजी ने नारी सशक्तिकरण का मुद्दा गरीब औरत से उठाया । आमधारणा के एकदम विपरीत, जहाँ नारी गरीबी में दब जाती है, जवान बंद होती है, वहाँ वह यह नारी कर्मठ है, मुखर है, अपने को किसी हीन ग्रंथि में नहीं धकेलती । पुरुष को ही हीन रखा है ।

***

गुल्लू

❋ लेखिका परिचय(मैत्रेयी पुष्पा) :

मैत्रेयी पुष्पा का जन्म 1944 ई, में अलीगढ़ में हुआ । हिंदी में एम.ए. कर भी नौकरी नहीं की । वे स्वतंत्र लेखन में लगी रही ।

संप्रति नोयडा में निवास है ।

उन्हें सार्क लिटररी अवार्ड, कथा पुरस्कार, प्रेमचंद सम्मान, सरोजिनी नायडू सम्मान एवं साहित्यकार सम्मान आदि अनेक सम्मान मिले हैं ।

आज की प्रमुख चर्चित और सजग लेखिका हैं । इनके उपन्यासों में नारी अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष करती हैं । यह संघर्ष समाज से, रूढ़ियों से, सड़ी-गली परंपराओं से और पुरुष की जड़ मानसिकता से है । अपने ऊपर दोहरा अन्याय और अत्याचार को चुपचाप नहीं सहन करती । उसका दृढ़ता से मुकाबला करती है ।

स्त्री सर्वाधिक चर्चित रही है यौन संबंधों को ले कर, यह सर्वाधिक संवेदनात्मक बिन्दु है । परंतु यहाँ भी नारी अत्यंत सबल एवं सकारात्मक रुख अपनाती है । मैत्रेयीजी की नारी अपने पर थोपे बंधन काट कर फेंक देती है । वे अपने पर थोपे बंधन नहीं रख पाती ।

वे महा नगर की तुलना में सामाजिक आर्थिक दृष्टि से अविकसित और पिछड़े कस्बाई और ग्रामांचल के परिवेश को आधार बनाती हैं । कई रूपों और कई स्तर पर हो रहे परिवर्तन को लक्ष्य करती हैं । इन परिवर्तनों के सापेक्ष्य अपने सामान्य स्त्री पात्रों को उनकी शक्ति और गरिमा के साथ प्रस्तुत करती हैं । वे भाग्य और नियति के आगे समर्पण से इनकार करती हैं । संकल्प और साहस के साथ खड़ी होती हैं । स्त्री सामाजिक बदलाव में भूमिका लेती है । इस प्रकार सामान्य स्त्री की मानसिक सोच में आये बदलाव को रेखांकित कर रही हैं । टूटन इनमें नया विवेक पैदा कर देती है ।

❋ कथानक :

कहानी गुल्लू याने गुलाबचन्द की बेचैनी से शुरू होती है ।

वह पहलवानी करता है । शरीर गठीला है । पढ़ाई बारहवीं से आगे नहीं कर पाया । उमर होने पर विवाह के रिश्ते आने लगे । परंतु गुल्लू इनकार करता रहता है । आखि र एक पुलिस अफसर की बेटी से विवाह दहेज के लालच में पिता कर देता है । बहू घर में आती है - शर्त है कि वह आगे पढ़ाई करेगी । इसमें ससुर को क्यों और क्या आपत्ति होगी ? मगर उसे घर में आबद्ध रखा जाता है तो वह खुल जाती है । अब तक परंपरानुसार रीति-रिवाज मान रही थी । सबको नेग देती रही । जब कालेज जाने की बात आती है, गुल्लू रोक देता है । पर दूसरे दिन वह गाड़ी की चाबी खोल खुद ड्राइव करती है । गुल्लू को साथ नहीं लेती । यहीं पर उसका असली रूप खुलता है । कह देती है - अभी पढ़ाई करनी है - बच्चे पैदा नहीं करना ।

सुहाग रात को भी गुल्लू उसकी उपेक्षा कर बाहर आकर सोता है । वह दबे स्वर में बुलाती है । गुल्लू अन्दर नहीं जाता । दोनों में दूरी बढ़ने लगती है । दहेज में कार मिली उसको चलाने के लिए ।

- बाद में घर का काम-काज, खाना बनाने की बात उठती है - वह साफ इनकार कर देती है । पिता ने जो दहेज के पैसे दिये, उनसे नौकर का खर्च आराम से चल जायेगा ।

सारे गांव में बहू की चर्चा होती है । अफवाह फैलती है कि बहू ने गुल्लू को गाड़ी से धक्का दे उतार दिया । अकेली गाड़ी चला कर गई है । इस प्रकार नारी ड्राइव करती है । यह अपना अस्तित्व जाहिर करती है तो अफावहों की शिकार होती है । पर वह निर्भय निडर है । पढ़ाई करती है । अपने अस्तित्व के स्वरूप घर के बाहर अपने नाम की तख्ती लगवा देती है । उसमें अपनी डिग्री भी लिखा देती है । गांव भर में यह नई बात है । वह अपने कार्य में सहज भाव से जुड़ी है । जब कि उसकी चर्चा की ओर ध्यान नहीं देती ।

वह जींस और टीशर्ट पहन मर्द जैसी सजधज कर बाहर जाने निकली है । उसने साफ कह दिया - मुझे कुछ कहा तो पिता को रिपोर्ट कर दूंगी । मुकदमा हो जायेगा । इस घोषणा से सब सहम जाते हैं । उत्साह धीमा पड़ जाता है । मां, पिता इस नये तेवर से चौंक जाते हैं ।

वह गाड़ी में कह देती है - ''तुम मुझे अपनी मां क्यों देखना चाहते हो ?'' इस प्रकार बदलता औरत का वर्ताव, हाव-भाव और चिंतन एकदम आधुनिक और गतिशील हो उठा है । परंतु गुल्लू पहलवान या माँ या पिता कोई इसके साथ चल नहीं पाता , सह नहीं पाता ।

गांव में खबर फैल जाती है कि बहू ने गुल्लू को गाड़ी से पटक दिया । बराबरी कर उत्तर दे गाड़ी स्टार्ट करने लगती है तो गुल्लू कह देता है - ठीक है जाओ ! और वह उसे छोड़कर चल देती है ।

❋ विश्लेषण :

यह कहानी पचास साल में बदल रहे नारी के स्वरूप , स्वभाव और स्वाभिमान को लेकर रची गई है । गुल्लू के सामने उसकी पत्नी को एकदम उग्र एक्सट्रोवर्ट के रूप में प्रस्तुत किया है । वह विवाह कर आयी तभी से स्पष्टत: अपने भाव व्यक्त कर देती है । अपनी अधूरी शिक्षा विवाह के बाद भी पूरी करना चाहती है । पिता का घर छोड़ने के बाद पति का घर अपना है । अत: वहाँ नेमप्लेट लगाती है । इसमें उसे कोई संकोच या डर नहीं रहा । समाज की खोखली वर्जना को दूर कर चुकी है । वह चाहे पति हो या ससुर या सास ।

नई पहचान में वह नारी देहिक पहचान को सामान्य रूप में लेती है । पतिमें पहलवानी है, मगर सहवास के प्रति गुरु का कहना है कि यह पहलवान के लिए वर्जित है - अत: दूर रहता है । पति को रास्ते पर लाने का प्रयास करती है । परंतु विवाह ने जीवन को उन्नत करने (पढ़ाई कर) के रास्ते में रुकावट नहीं डाली । इस प्रकार आजादी के पहले की औरत अबकी नारी का अंतर स्पष्ट दिख रहा है । अर्थात् वह 'तार्किक प्रगतिशील' है । आंदोलनात्मक रूप में विनाशक प्रगतिशील नहीं है । यह शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक सभी स्तर पर परिलक्षित है । परंतु मुख्यत: मानसिक है । यह न तो लेखक के हाथ की कठपुतली है और न समाज के हाथ की । अपने अस्तित्व को वह खुद बना रही है । पूरी निडर व दबंग होकर ।

इस कहानी का मुख्य पात्र गुल्लू है । मनोवैज्ञानिक तौर पर उसे पहलवानी गुरु ने स्त्रैण बना दिया है । वह नपुंसक नहीं है । अच्छे घराने का है । परंतु उसे गलत समझ दी गई है । अत: वह पत्नी के साथ सामान्य व्यवहार करने में असफल रहता है । अब पत्नी पढ़ी-लिखी, पुलिस अफसर की बेटी होने के कारण रूढ़िवादी संस्कारों से मुक्त है । उसमें आधुनिकता के सारे लक्षण ही नहीं हैं, अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों दोनों के प्रति पूरी तरह सचेत है । तभी तो अपनी अधूरी पढ़ाई संपूर्ण कर नारी बनने में पीछे नहीं रहती । जब उसके अधिकारों पर आंच आती है, अथवा उसे अपने रास्ते से रोका जाता है, वह जानती है कि किस तरह धमकी देकर अपना बचाव किया जाये । उस वक्त किसी से डरती नहीं । उलटे दबंग हो कर, निर्भयता के साथ उत्तर देती है, अपने रास्ते चलती है । जब पत्नी पर अनुशासन और फिर शासन की बात आती है, वह पहलवान के आगे पहले तो मीठे, नम्र शब्दों में अपनी बात कहती है । चुप रह कर बाद में लेखक कहते हैं -

''मैं विशुद्ध पुरुष, घर का कर्ता, जिसके साथ इस दरोगा की बेटी की किस्मत नत्थी है ।''

पर कुछ दिन बाद उसके इस भ्रम को तोड़ने वह जींस और टाप में है ! वह कड़क के साथ आज भिन्न तेवर में है । क्योंकि सामान्य स्तर का अर्थ गलत लिया । गल्लू को गाड़ी से उतार, स्टार्ट कर चली गई । यहीं लेखिका ने कहानी का चरम रखा है -

''एक पहलवान का अपमान । एक पति का तिरस्कार । ससुराल की मर्यादा का बहिष्कार,'' गुल्लू अकेला परिवार की परंपरा रख नहीं पाता ... । इसलिए मैत्रेयीजी ने करारी टिप्पणी की है -

गुल्लू अब 'खानदान के बिगड़े हुए इतिहास पर सिर धुनता है ।''

अब उस घर पर साइन बोर्ड उसने अपने हक को जाहिर करते हुये लगाया है - ''श्रीमती सुलक्षिणी यादव बी.ए.'' । अगर उसकी मर्यादा और उसका हक नहीं देते हैं तो वह इस तरह बोल्ड हो कर, ठीक कर लेती है । लेखिका समझ रही हैं यह पुरानीऔर नयी पीढ़ी के टकराव का भयंकर परिणाम है । अगर मां-पिताजी और पति तीनों ही बदलाव नहीं समझ रहे तो फिर बहू गांव में भरी दुपहरी में देखती हैं -

''गांव के बीच दिन में कुत्ते रो रहे हैं ।'' इस संकेत से संयुक्त परिवार और आधुनिक युग में उसकी स्थिति पर करारा व्यंग किया है ।

***

बावजूद इसके

❋ लेखिका परिचय(चित्रा मुद्गल)

चित्रा मुद्गल का जन्म 1944 ई. में चेन्नई में हुआ । आपने हिंदी में एम.ए. किया ।

आप प्रसार भारती बोर्ड की सदस्य थी । बाद में 'इंडियन क्लासिक्स' सीरीज में भारतीय कहानियों के चुनाव और उनके दूरदर्शन पर प्रसार में प्रमुख भूमिका निभाई । सामाजिक कार्यों में संलग्न रही हैं ।

उन्हें हिंदी के श्रेष्ठ साहित्य के लिए बिरला फाउण्डेशन द्वारा प्रदत्त व्यास पुरस्कार से सम्मानित किया गया । उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा साहित्य भूषण सम्मान प्रदान किया गया है ।

संप्रत्ति आप नई दिल्ली में रहती हैं ।

❋ कथानक :

नायिका का विवाह गोयल से हो चुका है । परंतु दोनों ही असंतुष्ट हैं । वह ब्रिज खेलता है, शराब पीता है और ऊपर से शालीनता ओढ़े फिरता है । वह कंपनी में एक्जीक्यूटिव है । अत: इस नई सभ्यता को नायिका स्वीकार नहीं कर पाती । नतीजा - झगड़ा - फिर मारपीट हो जाती है । न वह बदली और न नायक ।

देवर जतिन है । वह इसे सह नहीं पाता । वह विवाह के बाद इस वातावरण में जी न सकेगा । बंबई जा रहा था तो भाभी को भी मायके छोड़ने ले जाता है । भाभी को रास्ते में कुछ रक्तस्राव होता है । घर पहुँच तुरंत मैटरनिटी अस्पताल ले गए । गहरी चिकित्सा के बाद गर्भ बचा । गोयल यह नहीं जानता ।

अभद्रता न करने का वादा कर वापस घर ले आता है । बेटी मोना जन्म लेती है । वह नया प्लेंटलेट है । निरंकुश हो गया । मोना बीमार हुई । सीरियस और फिर चल बसी । इस उपेक्षा से वह एकदम दु:खी हो उठती है । पीहर आ गई । भाभी उसे स्वावलंबी बनने की बात पर कह देती है -

''घर से निकल कर चार अन्य लोगों का शोषण और लताड़ बरदाश्त कर सकती हो, पर अकेले पति को सहन नहीं कर सकती । यह कैसा स्वाभिमान है ?'' भैया भी निरपेक्ष बने रहते हैं ।

फिर वह एक बड़े होटल में रिसेप्सनिष्ट पद पर काम करने लगती है । जतिन बार-बार पत्र लिखता । अंत में उसे पता चल गया कि वह होटल में कुँवारी बन कर नौकरी कर रही है । अत: होटल को सचाई का पत्र लिख डाला । इस पर होटल मैनेजर फायदा उठाने की सोच रहा है । उसे प्रस्ताव दिया कि गेस्ट एंटरटेनमेंट को राजी हो तो उसके विरुद्ध पत्र आगे नहीं बढ़ायेगा । वह चुपचाप उठकर घर आती है । वहाँ भी भैया को खत मिला है । इस में भी भैया पर भी आक्षेप है । तो भैया बोखला जाते हैं । गोयल तलाक के कागज बिना दस्तखत के लौटा देता है । भैया पर आरोप , आक्षेप से वे एकदम विचलित हो उठते हैं । वे उसके नौकरी करने का विरोध नहीं कर पाते ।

अब वहाँ से उठ कर लौट रही है - तिराहा है - लौटे, नौकरी करे या पीहर में चुप रहे या इस्तीफा दे दे !

आखिर अपनी कमजोरी पर विजय पा लेती है । वह नौकरी नहीं छोड़ेगी । गोयल जैसे के कारण जीवन से भागेगी नहीं । संघर्ष करने दृढ़ प्रतिज्ञ हो जाती है ।

❋ विश्लेषण :

चित्राजी की लेखनी में सशक्त हो रही नारी की कहानियां हैं । इनमें पीहर है, ससुराल है और है नौकरी की जगह । तीनों में तीन तरह का वातावरण देख रही है । नारी अब पढ़-लिख कर समझदार बन रही है । वह घर में मां के साथ सुर लेती है भाभी से सीख पाती है । भैया से उसका व्यवहार जान लेती है । अंत में नौकरी में मैनेजर की आँखों में उसकी नियोजन का जो भाव है, वह भी समझ रही है ।

इस प्रकार हर तरफ से घिरी वह एक बार तो भागने के लिए पत्र लिख देती है । पर सब पर विचार कर निर्णय पर पहुँचती है । उसकी अकेली की जिन्दगी में जहाँ जायेगी, हमले होंगे । वह इस्तीफा फाड़ देती है । अपने को बचायेगी । पति के शोषण एवं दुर्व्यवहार से दूर रहेगी । सर्वोपरि नौकरी कर भैया पर निर्भरशीलता भी हटा देगी ।

यह कहानी नारी के बदलते रूप का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत कर रही है । अशिक्षा, दहेज आदि से तो मुक्त है परंतु पति के दबाव से छूट नहीं पायी । पति -पत्नी में समानता के आधार पर रिश्ता नहीं बना । अत: वह प्रताड़ना सहती है । लेकिन समझ बूझ और अपने पैरों पर खड़ी होने की दृढ़ता बना ले तो हर समस्या का सामना कर सकती है । अगर दुर्बल रही तो या तो पति दबायेगा अथवा जहाँ नौकरी करती है वह फायदा उठायेगा । इस सारी दुविधा में पड़ कर विचलित हो कर एक बार तो नौकरी छोड़ने की सोच ले । परंतु उसका अपना स्वाभिमान मरा नहीं है । अत: वह इस्तीफा फाड़ संघर्ष के लिए तैयार होती है । यही है बदली नारी की तस्वीर । यही है पचास बरस में मजबूत हुई भारतीय नारी का

सशक्तीकरण वाला असली चित्र । वह न आर्थिक दबाव सहती है और न सेक्सुअल मुद्दे पर बांह मरोड़ने को सहती है । इस प्रकार चित्राजी की कहानी में भारतीय नारी का नया होता उज्वल रूप प्रस्तुत किया है ।

वास्तव में यह परिदृश्य घर में दबी नारी के बाहर निकलते स्वरूप का है । स्त्री पुरुष की तरह समाज में चल फिर सके, अत: सड़क पर उतरी है, दफ्तर में या रिसेप्सनिष्ट की डेस्क पर आती है । नारी का यह रूप परिवार और पीहर दोनों के लिए नया है । दोनों तरफ पढ़े-लिखे लोगों का आधुनिक परिवेश है । फिर भी कामकाजी महिला को आम संघर्ष की तरह सारे खतरों का सामना करना पड़ता है । वहाँ नारी एक बार तो जरूर लड़खड़ायेगी । उसे लगेगा हार रही है । परंतु संतुलित हो कर सोचेगी तो फिर कामों में ताकत भर जायेगी । हाथों में रखा इस्तीफा किरचकिरच हो कर लिखा जाता है । यह नारी विमर्श में नारी की नई दिशा है । उसके स्वस्थ, सबल और सही संघर्ष का उभरता चित्र है ।

***

दूसरा ताजमहल

❋ लेखिका परिचय (नासिरा शर्मा) :

नासिरा जी का जन्म ई. १९४८ में हुआ । नौकरी नहीं स्वतंत्र लेखन से जुड़ी रही । हिन्दु परिवार में विवाह के बावजूद अपना नाम नहीं छोड़ा । नारी जीवन की वेदना-विवशता और फिर जीवन का यथार्थ और उससे समझौता करते -करते टूटना यह उनका बेबाकी से चित्रण का तरीका है ।

फिलहाल आप दिल्ली में रहती हैं । कहानी, उपन्यास विधाओं में खूब सफलता मिली है । आधुनिक युग से मेल खाते हुए आपने टेलीफिल्म भी लिखी । बाल साहित्य लेखन और साक्षरता से जुड़ी प्राथमिक स्तर की पुस्तकें भी लिखी हैं ।

अपने लेखन के बल पर प्रतिष्ठा पा सकी हैं और सम्मान तथा अनेक पुरस्कार भी मिले हैं ।

❋ कथानक :

'दूसरा ताजमहल' नासिरा की प्रसिद्ध कहानी है । नयना शादीशुदा प्रतिष्ठित महिला है । प्रौढ़ हो चुकी है । पति नरेंद्र प्रसिद्ध डॉक्टर हैं जिनकी व्यस्तता बढ़ती जाती है । अस्पताल में एक पर एक कामयाबी के चलते उनका जीवन-रोगी सेवा में ज्यादा व्यस्त रहता है । दो बच्चे हैं । उनको अच्छी शिक्षा दी, वे अब अमेरिका में पढ़ाई करने गए हैं । बहुत संभव है वे वहीं रह जायें ।

नयना इस उपेक्षा से काफी क्षुब्ध हो जाती है । पति की बढ़ती जिम्मेदारियां समझते हुए भी वह अपने डेकोरेशन पेश में मुंह छुपाने की कोशिश करती है । परंतु उसका सिर दर्द बढ़ता ही गया । इस दौरान वह रविभूषण के संपर्क में आती है । धीरे-धीरे उनका संपर्क गहरा जाता है । पर वह दिल्ली में है और रवि मुंबई में । अत: फोन कॉलों से घनिष्ठता बढ़ती है । इससे नयना को लगा यह संबंध जीवन में एक नई उपलब्धि है । खुशमिजाजी आ जाती है । उम्र के इस दौर में नया उत्साह और उमंग भर जाती है । रवि प्रसिद्ध आर्किटेक्चर है । अपने नये-नये प्रोजेक्टों में व्यस्त रहता है । परंतु रात में नयना से दस बजे के बाद बात करता है । कॉल की अवधि बढ़ती जाती है । नयना की उदासी, एकाकीपन खूब कचोटने लगता है । इस प्रकार समय बीत रहा है । पर दबाव बढ़ता है । इसी तनवाव में वह रवि की बातों में खिंच कर उस की ओर झुकती है ।

आखिर वह जब देखती है कि नरेन्द्र हफ्ते भर के लिए बाहर गया है, इस रिश्ते को समाप्त करने का मन बना लेती है । अपनी अटैची, अपने पीहर के गहने पर्स में डाल एयर टिकट कर मुंबई चल पड़ती है । वहाँ एयर पोर्ट पर ड्राइवर लेने आया है, इसे सह नहीं पाती । बाद में देखा रवि का प्रोग्राम व्यस्त है । दुपहर में आकर रवि पूछता है -''तुम ठहरी कहाँ हो ?'' तब यथार्थ से चौंक जाती है । रवि की सिगरेट और शराब की आदत है । अत: रात में दस के बाद होश बदल जाते हैं । क्या कहता है, वादा करता है, अगले दिन कुछ याद नहीं रहता । तब नयना समझ जाती है कि रवि का प्रेम कितना हलकी नींव पर टिका है । रवि अगले दिन मिलने की कह सारा प्रबंध कर मीटिंग में चला जाता है । पीछे बैठी नयना 'क्लायंट' भर है अपने लिए यहाँ जगह नहीं देखती । अत: टिकट कर वापस लौट जाती है । घर लौट कर हालत बिगड़ना जारूरी है और ब्लड प्रेसर बढ़ने पर वह खत्म हो जाती है ।

❋ विश्लेषण :

नयना, नरेन्द्र और रवि तीन पात्रों पर यह लंबी कहानी टिकी है । इसमें प्रमुख भूमिका नयना की है । आधुनिक जीवन की व्यस्तता भरी जिन्दगी में वह उपेक्षा की शिकार है । पति जीवन और जीविका में उलझ कर नयना की तरफ ध्यान दे नहीं पाता । जब कि सिगरेट का शौकीन रवि उसकी ओर आकर्षित होता है । परंतु वह भी शराब के नशे में जो कहता है, सब बाद में प्राय: भूल जाता है । नयना उसकी बातों को यथार्थ मान अपने जीवन से भाग आती है । यथार्थ देखकर वह फिर लौट जाती है । परंतु अब जीवन की सार्थकता कहीं नहीं रही अत: अपनी चिकित्सा नहीं कराती । वह ताजमहल के खयाली जीवन में दफन हो जाती है ।

रवि का चरित्र अजीब है । आर्किटेक्चर की जिंदगी में पैसा खूब कमाता है । उसी में वह नयना को कई वादे कर बैठता है । पर वह सब रात में नशे में नयना से की गई बातें हैं । जब कि नयना उन्हें सच मान घर छोड़ आ जाती है । रवि स्थिति स्पष्ट कर देता है -नशे में कुछ कहा होगा । कुछ याद नहीं । उसके लिए क्षमा कर दें । रवि का जीवन आर्थिक दृष्टि से संपन्न है । परंतु पारिवारिक जीवन खोखला है । पत्नी के साथ रह नहीं पाता औरतों से बात करना शौक भर है । बाकी गहरे में जाना उसके स्वभाव में नहीं । वैसे वह नयना का क्लायंट की तरह पूरा खयाल रखता है - एयरपोर्ट पर गाड़ी भेजना, अपने स्टाफ को उसका ध्यान रखना, होटल की व्यवस्था -आदि सब में पूरी तरह कुशल है । पर कहीं उसमें प्रेम का चिन्ह नहीं मिलता । स्पष्ट है कि रात दस बजे नशे में आने के बाद वह बदल जाता है । इस प्रकार का चरित्र अत्यंत दयनीय लगता है । वह मनौवैज्ञानिक रूप में बीमार है । रुग्णता शरीर को स्पर्श नहीं करती । अन्यथा वह सामान्य है । इस पहचानने का मुंबई आने पर अवसर मिलता है । रवि जीवन

के सारे कार्य करता है । उसके आचरण से नयना घोर निराश होती है क्योंकि यहाँ प्रेम के नाते नहीं एक क्लायंट के रूप में सारा व्यवहार मिला है ।

तीसरा पात्र डॉ. नरेन्द्र है । शुरू में तो नयना का ध्यान रखता है । पर नयना और नरेन्द्र दोनों के प्रोजेक्ट अलग प्रकार के हैं । अत: दोनों में दूरी बढ़ती जाती है । नरेन्द्र डाक्टरी पेशे के कारण उसमें बहुत ज्यादा समय देने को मजबूर है । उसे नयना से कोई शिकायत नहीं । पर नयना तो इतनी परेशान है कि उसके साथ बड़ी विडंबना है । नयना समझ कर भी नासमझ बनती है । नरेंद्र जान कर भी अनजान बना रहता है । उसे पैसे कमाने की धुन नहीं है । परंतु ऐसे अच्छे डाक्टर के चरणों में पैसे का ढेर स्वत: लगता है । इसके लिए समय भी उतना ज्यादा देने को बाध्य हो जाता है । यहीं उसकी दुर्बलता मान लेती है नयना । मानसिक रूप में नरेंद्र से दूर होती है । नरेंद्र प्राय: अनजान है । नरेंद्र की यह बेरूखी उसके जीवन की समस्या बन जाती है । इसीमें वह अपनी पत्नी खो देता है ।

लेखिका ने प्रत्यक्षत: उस पर कोई टिप्पणी नहीं की है । पर नयना के मूल ताजमहल की केन्द्र दफन होने में उसी की भूमिका प्रमुख मानी है । इसका मुख्य दोषी वही है । लगता है प्रेम का छद्म ही है दूसरा ताजमहल ।

इस कहानी में आधुनिक जीवन में होने वाली मानसिक घुटन, कर्मव्यस्तता से उपजी उपेक्षा और नारी मन की सहज आकांक्षा उसमें उपजी निराशा है, तनाव मुख्य है । एक पुरुष कार्यव्यस्त है, दूसरा नशे में धुत होकर आकर्षण फेंकता है । नारी को दोनों ओर प्रेम नहीं मिलता । प्रेम बिना जीवन की सार्थकता कहाँ रही ? नासिरा ने इस कहानी में मानवी मन का बड़ी बेबाकी से चित्रण कर कहानी में प्रतीकात्मकता भर दी है । आधुनिक जीवन की विडंबना का मार्मिक रूप प्रस्तुत किया है ।

3.9 अभ्यास प्रश्न :

क) निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

i) भारत में नारी के प्रति दृष्टि प्रारंभिक काल में संबंधी धारा पर प्रकाश डालिए ।

ii) हिंदी में नारी विमर्श के आदिकालीन और मध्य युगीन आभिमुख्य का परिचय दीजिए ।

iii) हिंदी की स्वातंत्र्योत्तर नारी संबंधी दृष्टि का परिचय दीजिए ।

iv) हिंदी की स्वातंत्र्योत्तर कहानी में नारी विमर्श की रूपरेखा स्पष्ट कीजिए ।

v) वैश्वीकरण में हिंदी में उपलब्ध स्त्री लेखन पर प्रकाश डालिए ।

ख) निम्न के संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

i) 'दूसरा ताजमहल' के कथानक की विशेषता बताइए ।

ii) 'स्त्री-सुबोधिनी' के शिल्प पर विचार कीजिए ।

iii) 'बानो' के चरित्र पर प्रकाश डालिए ।

iv) 'मेरे देश की मिट्टी : अहा' कहानी में व्यंग्य स्पष्ट कीजिए ।

v) 'छोटे खिलाड़ी' का विश्लेषण कीजिए ।

ग) निम्न के अति संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

i) 'आदमकद' की रचनाकार कौन हैं ?

ii) 'गुल्लू' का पूरा नाम क्या है ?

iii) गुल्लू की नायिका कौन है ?

iv) 'बावजूद इसके' में कथाकार सकारात्मक या निराशाजनक भावों से -ग्रस्त है ?

v) 'छोटे खिलाड़ी' में छोटा खिलाड़ी किसे कहते हैं ?

vi) 'बानो' के दूसरे पति का नाम क्या है ?

vii) बानो क्या पहला पति के घर जाना चाहती है ?

viii) हिंदी में कृष्णा सोबती के एक प्रसिद्ध कहानी संकलन का नाम लिखिए ।

ix) स्वातंत्र्योत्तर एक कथा लेखिका का नाम लिखिए ।

x) 'दूसरा ताजमहल' की नायिका कौन है ?

xi) नायिका दिल्ली छोड़कर किस के पास जाती है ।

xii) नायिका के पति का पेशा क्या है ।

***